भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

रिपोर्ट सं. 253

उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015

जनवरी, 2015

न्यायमूर्ति अजित प्रकाश शहा
भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
भारत सरकार
हिन्दुस्तान टाइम्स हाउस
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली - 110001
दूरभाा : 23736758 फैक्स : 23355741

Justice Ajit Prakash Shah
Former Chief Justice of Delhi High Court
Chairman
Law Commission of India
Government of India
Hindustan Times House
K.G. Marg, New Delhi-110 001
Telephone : 23736758, Fax : 23355741

अ.शा. सं. 6(3)244/2013-एल.सी.(एल.एस.·) तारीख : 29 जनवरी, 2015

प्रिय श्री सदानन्द गौड़ा जी,

भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की स्थापना को व्यापक रूप से भारत की सिविल न्याय प्रणाली में सुधार के बारे में एक सोपान के रूप में देखा जाता है । पहले व-र्ा 2003 में, भारत के सत्रहवें विधि आयोग ने उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग के गठन के मुद्दे पर विचार किया और ''उच्च न्यायालयों में उच्च-तकनीक त्वरित निपटान वाणिज्यिक प्रभागों के गठन की प्रस्थापना'' नामक शी-र्ाक वाली अपनी रिपोर्ट सं. 188 के माध्यम से अपनी सिफारिशें प्रस्तुत किया । व-र्ा 2009 में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग के गठन की प्रस्थापना को अनुमोदित किया और परिणामतः, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 संसद् में पुरःस्थापित किया गया । यह लोक सभा द्वारा पारित किया गया और राज्यसभा की चयन समिति और मंत्रिमंडल द्वारा सुझाए गए कतिपय संशोधनों के पश्चात् पुनरीक्षित उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2010 राज्यसभा में पुरःस्थापित किया गया । तथापि, तत्कालीन केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री ने संसद् के कई सदस्यों द्वारा व्यक्त की गई चिंताओं को दूर करने के लिए विधेयक में और परिवर्तन करने के लिए राज्यसभा से और समय की मांग की । इस प्रकार विधेयक को ''वाणिज्यिक विवाद'' की व्याप्ति और परिभा-ाा पर विशे-ा बल देने के साथ प्रस्तावित विधेयक के विभिन्न उपबंधों पर फिर से विचार करने के लिए भारत के बीसवें विधि आयोग को निर्दि-ट किया गया ।

मामले के महत्व और संसद् के भीतर और बाहर एक समान व्यक्त की गई चिंताओं का मूल्यांकन करते हुए बीसवें विधि आयोग ने विधेयक के विभिन्न उपबंधों की ठीक तरह से विचार करने का विनिश्चय किया । इस आशय से, आयोग ने एक विचार-विमर्श पत्र तैयार किया जिसे मामले को गहनतापूर्वक विचार करने के लिए गठित आसीन न्यायाधीशों और विशे-ाज्ञ विधिक वृत्तिकों से मिलकर बनी विशे-ाज्ञ समिति के सदस्यों को परिचालित किया गया । सतत विचार-विमर्श

· निवास : 1, जनपथ, नई दिल्ली

के पश्चात् विशे-ज्ञ समिति ने दूसरा चर्चा पत्र तैयार किया । दूसरे चर्चा पत्र का भी गहन अध्ययन किया गया और उसमें अंतर्वि-ट विभिन्न मुद्दों पर गहनतापूर्वक विचार करने के पश्चात् आयोग ने अब **"उच्च न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015"** शी-र्क की अपनी दो सौ तिरपनवीं रिपोर्ट तैयार की है ।

रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ-साथ उच्च मूल्य वाणिज्यिक वादों के शीघ्र निपटान को सुनिश्चित करने के लिए वाणिज्यिक न्यायालय और उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग की स्थापना की सिफारिश की गई है । इस आशय से, "उच्च न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015" शी-र्क का एक नया विधेयक आयोग द्वारा प्रारुपित किया गया है और रिपोर्ट में उपाबंध के रूप में उपाबद्ध है । इस प्रारुप विधेयक को विरचित करते समय आयोग ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के संशोधनों के रूप में सारवान प्रक्रियागत परिवर्तनों का सुझाव दिया है । इन सुझावों का लक्ष्य मामलों का शीघ्र, नि-पक्ष और वादकारियों को युक्तियुक्त लागत पर निपटान सुनिश्चित करना है । मुझे विश्वास है कि आयोग की यह 253वीं रिपोर्ट सभी पणधारियों और विधि निर्माताओं की चिंताओं को समानतः दूर करेगी । मैं सरकार के समक्ष विचारार्थ रिपोर्ट सं. 253 की प्रति संलग्न कर रहा हूं ।

सादर,

भवदीय
ह0/-
(अजित प्रकाश शहा)

श्री डी, वी. सदानन्द गौड़ा
माननीय विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार
शास्त्री भवन
नई दिल्ली - 110 001

रिपोर्ट सं. 253
उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015

वि-नय-सूची

अध्याय		शी-र्षक	पृ-ठ
I.		**रिपोर्ट की पृ-ठभूमि**	6
	क.	विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट	6
	ख.	उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक 2009 के उपबंधों की स्कीम	8
	ग.	उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 पर चयन समिति की रिपोर्ट	10
	घ.	राज्यसभा द्वारा व्यक्त की गई चिंताएं	11
	ङ	वर्तमान विधि आयोग का अधिदेश	12
II.		**वर्तमान विधेयक की खामियां**	15
	क.	विधेयक के क्रियान्वयन की कठिनाइयां	15
		(i) सभी उच्च न्यायालयों में आरंभिक अधिकारिता की कमी	15
		(ii) एक ही न्यायालय के भीतर भिन्न-भिन्न धनीय अधिकारिताएं	16
		(iii) मामलों की अधिक विचाराधीनता	17
		(iv) मामलों के निपटान में विलंब और बकाया	25
		(v) उच्च न्यायालय के भीतर लंबित मामलों को एक दूसरे न्यायालय में अंतरण	27
	ख.	प्रक्रियागत उपबंधों की कठिनाइयां	28
		(i) अव्यवहार्यता	28
		(ii) उच्चतम न्यायालय को सीधी अपील संभव नहीं है	30
	ग.	मुकदमों के संचालन की रीति में परिवर्तन का विरोध	30
		(i) यूनाइटेड किंगडम	34
		(ii) सिंगापुर	38

	घ.	वाणिज्यिक प्रभाग में विशे-ाज्ञता पर बल नहीं	39
III.		**उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 को आधुनिक बनाने और पुनः विरचित करने की आवश्यकता**	41
	क.	भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की स्थापना	41
		(i) आर्थिक विकास वृद्धि	41
		(ii) भारतीय न्यायिक परिदान प्रणाली की अंतरर-ट्रीय छवि में सुधार	42
		(iii) विधिक संस्कृति में सुधार	43
	ख.	पिछले पांच व-ाों में महत्वपूर्ण विकास	44
		(i) आदर्श न्यायालय	44
		(ii) उच्च न्यायालयों की न्यायिक संख्या में वादागत वृद्धि	45
		(iii) कंप्यूटरीकरण	45
	ग.	वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय के सृजन के लिए नए सिरे से प्रस्ताव	46
	घ.	वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के लिए नामांकन तथा वाणिज्यिक न्यायालय की नियुक्तियां	48
	ङ.	वाणिज्यिक न्यायालयों के लिए संस्थागत व्यवस्था	49
	च.	प्रक्रियागत सुधार	50
		(i) वाणिज्यिक न्यायालयों और वाणिज्यिक प्रभागों में अपनाई जाने वाली विशे-ा प्रक्रिया	50
		(ii) लागत	52
		(iii) न्यायालय फीस	55
		(iv) अपील	55
		(v) अतिरिक्त उपबंध	56
		क. माध्यस्थम्	56
		ख. वाणिज्यिक प्रभागों द्वारा वाणिज्यिक विवादों से संबंधित रिट याचिकाओं की सुनवाई	57
		क. अन्य विधि द्वारा सिविल न्यायालय अधिकारिता का अपवर्जन	58
IV.		**नि-कर्-ा और सिफारिशों का संक्षिप्तांश**	59
		उपाबंध	67

अध्याय 1
रिपोर्ट की पृ-ठभूमि

1.1 उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 (जिसे इसमें इसके पश्चात् ''विधेयक'' कहा गया है) को व-र्ा 2009 में वाणिज्यिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग स्थापित करने और उनसे संबंधित या उनके आनु-ांगिक वि-ायों का उपबंध करने के लिए प्रारुपित किया गया था।

क. विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट

1.2 व-र्ा 2003 में, विधि आयोग ने स्वप्रेरणा से 1991 - पश्चात् देश की आर्थिक नीतियों में व्यापक परिवर्तन; यह अवधारणा कि अति विलंब के कारण भारतीय न्यायिक प्रणाली ''ध्वस्त हो गई'' ; और घरेलू और विदेशी निवेशकों को उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवादों का शीघ्र निपटान का आश्वासन सुनिश्चित करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग की स्थापना को प्रस्तावित करने के मुद्दे पर विचार आरंभ किया ।

1.3 ''उच्च न्यायालयों में उच्च तकनीक त्वरित निपटान वाणिज्यिक प्रभागों के गठन की प्रस्थापना'' शी-र्ाक वाली अपनी 188वीं रिपोर्ट में, आयोग ने उच्च मूल्य या जटिल वाणिज्यिक मामलों को निपटाने हेतु वाणिज्यिक न्यायालयों का गठन करने की अंतरर-ट्रीय पद्धति और भारत में ऐसे वाणिज्यिक न्यायालयों की आवश्यकता पर विचार किया । इसका लक्ष्य निवेशकों को स्प-ट आश्वासन देना था कि उच्च मूल्य वाणिज्यिक वाद सभी उच्च न्यायालयों में गठित किए जाने वाले वाणिज्यिक प्रभाग के समक्ष सीधे विचारित होंगे जिसमें ''माध्यस्थम् और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2002'' पर अपनी 176वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के अनुरुप त्वरित निपटान प्रक्रियाएं अपनाई जाएगी। ये वाणिज्यिक प्रभाग विदेश में वाणिज्यिक न्यायालयों में प्रयुक्त उच्च तकनीक वीडियो कान्फ्रेंसिंग सुविधाओं से भी सुसज्जित होंगे ।

1.4 विधि आयोग ने यूनाइटेड किंगडम (इसके पश्चात् ''यू. के.'') ; यूनाइटेड स्टेट्स आफ अमेरिका, विशे-ाकर न्यूयार्क और मैरीलैण्ड राज्य ; सिंगापुर ; आयरलैण्ड ; फ्रांस ; केन्या और नौ अन्य देशों के वाणिज्यिक न्यायालयों का ऐसे देशों के वाणिज्यिक न्यायालयों में अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं और इन न्यायालयों द्वारा निपटाए जाने वाले मामलों के प्रकार पर गहनता से अध्ययन किया ।[1]

1.5 इस नि-कर्-ा पर पहुंचते हुए कि वस्तुतः भारत में ऐसे न्यायालयों की आवश्यकता है, आयोग ने भारत के प्रत्येक उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग के गठन की सिफारिश की । वाणिज्यिक प्रभाग का प्रयोजन उच्च धनीय मूल्य के वाणिज्यिक मामलों को शीघ्रता प्रदान करना होगा । संक्षेप में, विधि आयोग द्वारा अपनी 188वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश अनुसार वाणिज्यिक प्रभाग के मुख्य लक्ष्य इस प्रकार थे ।[2]

(क) प्रत्येक वाणिज्यिक प्रभाग दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ से मिलकर बनेगा और यदि आवश्यक हो तो एक से अधिक ऐसी न्यायपीठ हो सकेंगी । वस्तुतः, वाणिज्यिक प्रभाग में इतनी न्यायपीठें होंगी जितनी वाणिज्यिक मामलों के शीघ्र निपटान को सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित हों ।

(ख) उच्चन्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग की अधिकारिता ऐसे ''वाणिज्यिक विवादों'' पर होगी जिन्हें दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल शाखा) नियम, 1967 के अध्याय 3 (भाग V) के भाग घ के नियम 1 में यथा अंतर्वि-ट ''वाणिज्यिक खंड'' की परिभा-ा को अंगीकार कर और उपांतरित कर रिपोर्ट में परिभा-ित किया गया था ।

(ग) वाणिज्यिक प्रभाग की धनीय अधिकारिता एक करोड़ रुपए या प्रश्नगत उच्च न्यायालय द्वारा यथा अवधारित उच्चतर अंक हो सकता है यद्यपि पांच करोड़

---

[1] भारत का विधि आयोग, '' उच्च न्यायालयों में उच्च तकनीक त्वरित निपटान वाणिज्यिक प्रभाग के गठन की प्रस्थापना'' रिपोर्ट सं. 188(2003) ; 20-59 (इसके पश्चात् ''भारत का विधि आयोग, 188वीं रिपोर्ट'') ये देश फिलीपीन्स, पाकिस्तान, यूनाइटेड अरब अमीरात, पोलैंड, स्काटलैंड, रूस, रोमानिया, उक्रेन और घना ।

[2] भारत का विधि आयोग, 188वीं रिपोर्ट, पूर्वोक्त टिप्पण 1, पृ-ठ 164-180.

रुपए से अधिक नहीं होगा ।

(घ) अभिवचन फाइल करने की समयबद्धता, साक्ष्य के अभिलेखन और न्यायपीठ द्वारा निर्णय के परिदान का उपबंध करते हुए वाणिज्यिक प्रभाग में वादों के निपटान के लिए ''त्वरित निपटान प्रक्रिया'' विहित की गई थी ।

(ङ) वाणिज्यिक प्रभाग के न्यायाधीश लिखित निवेदन फाइल करने और साक्ष्य को पूरा करने के प्रयोजनों के लिए अधिवक्ताओं से ''मामला प्रबंधन सम्मेलन'' आयोजित करेंगे जो वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया का भाग गठित करेगा ।

(च) वाणिज्यिक प्रभाग के आदेशों और निर्णयों की कानूनी अपील भारत के उच्चतम न्यायालय के समक्ष की जा सकती है ।

ख. उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 के उपबंधों की स्कीम

1.6 त्वरित निपटान आधार पर कतिपय धनीय सीमा के ऊपर के वाणिज्यिक मामलों को विनिश्चित करने के लिए उच्च न्यायालय (वाणिज्यिक प्रभाग) के समर्पित न्यायपीठ के गठन के विधि आयोग के प्रस्ताव पर नई दिल्ली में 16 अगस्त, 2009 को ''राज्यों के मुख्यमंत्रियों और उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायमूर्तियों के सम्मेलन'' में विचार किया गया और स्वीकार किया गया ।

1.7 आयोग की उपरोक्त सिफारिशों के आधार पर लोक सभा ने 16 दिसंबर, 2009[3] को ''2009 का विधेयक सं. 139'' के रूप में विधेयक पुरःस्थापित किया गया और 18 दिसंबर, 2009[4] को पारित किया गया । विधेयक के निम्नलिखित मुख्य लक्षण है :

(क) खंड 3 उच्च न्यायालय को एक या अधिक न्यायपीठों को मिलाकर उस उच्च न्यायालय में ''वाणिज्यिक प्रभाग'' के गठन की शक्ति प्रदान करता है ।

---

[3] उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 ; भारत का संसद्, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 के विचार का प्रस्ताव (विधेयक पारित), लोक सभा बहस, 16 दिसंबर, 2009, उपलब्ध <http://164.100.47.132/LssNew/psearch/Result15.aspx?dbsl=1230>

[4] अक्षय मुकुल और इन्द्राणी बागची, लोक सभा ने 5 मिनट से कम समय में 17 विधेयकों को पारित किया । टाइम्स आफ इंडिया, 7 फरवरी, 2014, उपलब्ध <http://timesofindia.indiatimes.com/india/This-Lok-Sabha-cleared-17-of-bills-in-less-than-five-miutes/articleshow/29964406.cms>

(ख) विधेयक में यथा परिभाषित ''वाणिज्यिक विवाद'' और पांच करोड़ रुपए के ''विनिर्दिष्ट मूल्य'' या केंद्रीय सरकार[5] द्वारा नियत उच्च मूल्य के सभी वाद उच्च न्यायालय में फाइल किए जाएंगे और वाणिज्यिक प्रभाग[6] को आबंटित होंगे ।

(ग) विनिर्दिष्ट मूल्य से ऊपर के सभी वाणिज्यिक विवाद, चाहे वे उच्च न्यायलय या कहीं और लंबित हैं, को विधेयक के खंड 11 के अनुसार उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग को अंतरित किया जाएगा ।

(घ) वादों के अलावा, विनिर्दिष्ट मूल्य के ''वाणिज्यिक विवादों'' से संबंधित माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (इसमें इसके पश्चात् '' माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम'' कहा गया है) की धारा 34, 36 या 37 के अधीन सभी आवेदनों का विनिश्चय भी उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा किया जाएगा ।[7] माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 को भी ''न्यायालय'' की परिभाषा में परिवर्तन के लिए संशोधित किया गया और उपरोक्त उपबंध[8] को प्रभावी बनाने के लिए धारा 37 में एक परंतुक अंतःस्थापित किया गया ।

(ङ) वाणिज्यिक प्रभाग में अधिकारिता निहित करने के लिए आवश्यक वाद के ''विनिर्दिष्ट मूल्य'' का अवधारण खंड 8 के अधीन विधेयक में उपबंधित रीति से किया जाएगा ।

(च) वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का अधिकथन सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (इसे इसमें इसके पश्चात् ''सी.पी.सी.'' कहा गया है) के उपबंधों को अभिभावी ठहराते हुए किया गया जहां तक दोनों के बीच कोई विरोध था ।[9]

(छ) वाणिज्यिक प्रभाग के आसीन एकल न्यायाधीश को भी खंड 10 द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ साक्ष्य फाइल करने और लिखित निवेदन हेतु समय नियत

---

[5] खंड 2(1) सपठित खंड 7(1), उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009.

[6] खंड 4, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009.

[7] खंड 5, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009.

[8] खंड 19, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009.

[9] खंड 9, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009.

करने हेतु मामला प्रबंध सम्मेलन करने के लिए सशक्त किया गया था । प्रासंगिकतः, विधेयक का खंड 3(2) वाणिज्यिक प्रभाग के ''न्यायाधीशों'' के बारे में है और वाणिज्यिक प्रभाग में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ का उपबंध करता है ।

(ज) वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा पारित कोई डिक्री या आदेश खंड 13 के अधीन सीधे भारत के उच्चतम न्यायालय को अपील योग्य है ।

(झ) खंड 15 के अनुसार उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभाग की अधिकारिता द्वारा अधिकरण और अन्य पीठों की अधिकारिता प्रभावित नहीं होगी ।

ग. उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 पर चयन समिति की रिपोर्ट

1.8 विधेयक को स्थायी समिति को निर्दि-ट किए बिना लोक सभा में पारित किया गया । लोक सभा में इसके गमन के पश्चात्, राज्यसभा ने 22 दिसंबर, 2009 को विधेयक को विचारार्थ ग्रहण किया जिसके अनुसरण में विधेयक को उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 की चयन समिति (जिसे इसमें इसके पश्चात् ''चयन समिति'' कहा गया है) को निर्दि-ट किया गया । चयन समिति ने 29 जुलाई, 2010 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और विधेयक में परिवर्तन हेतु कतिपय सुझाव दिए । सुझाए गए कुछ मुख्य परिवर्तन इस प्रकार थे[10] :

(क) संयुक्त उद्यम करार, शेयरधारक करार, अभिदाय और विनिधान करार और आउट सोर्सिंग सेवा, कारबार प्रक्रिया आउट सेर्सिंग, बैंकिंग और वित्त, वित्त सेवाएं और इसी प्रकार सहित सेवा उद्योग को सम्मिलित करने के लिए ''वाणिज्यिक विवाद'' को विस्तारित किया जाए ।

(ख) विधेयक में एक स्प-टीकरण अंतःस्थापित किया जाए कि वाणिज्यिक प्रभाग में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ नहीं बनेगी बल्कि एकल न्यायाधीश

---

[10] राज्यसभा सचिवालय, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 पर चयन समिति की रिपोर्ट लोक सभा द्वारा पारित 29 जुलाई, 2010 को राज्यसभा में प्रस्तुत, <http://www.prsindia.org/uploads/media/Division%20High%Courts/Select%Committee%20Report.pdf>. पर उपलब्ध ।

वाणिज्यिक मामलों की अध्यक्षता करेगा ।

(ग) वाणिज्यिक विवादों के "विनिर्दि-ट मूल्य" के अवधारण हेतु उच्च न्यायालयों से परामर्श किया जाए । इसके अतिरिक्त, वाणिज्यिक प्रभाग की धनीय अधिकारिता इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए पांच करोड़ रुपए से घटाकर एक करोड़ रुपए किया जाए कि विधेयक पहले ही वादकारियों का दो वर्ग सृजित कर रहा था - ऐसा वर्ग जिनके विवाद पांच करोड़ रुपए (या विनिर्दि-ट मूल्य) से अधिक के हैं और जो सीधे उच्च न्यायालय जा सकते हैं और दूसरे वे लोग जिन्हें सिविल न्यायालय ही जाना पड़ेगा ।

(घ) पक्षकारों के साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए आयुक्त के रूप में नियुक्त किए जाने वाले अधिवक्ता के लिए अपेक्षित अनुभव के रूप में नियत व-र्षों की संख्या में कमी की जानी चाहिए ।

(ङ) ऐसे मामलों के सिवाय जहां बहस और विचारण पूरा हो चुका है, सभी लंबित वाणिज्यिक विवादों को विधेयक के खंड 11 के अनुसार वाणिज्यिक प्रभाग को अंतरित किया जाए ।

घ. राज्यसभा द्वारा व्यक्त की गई चिंताएं

1.9 चयन समिति की उपरोक्त सिफारिशों के आधार पर विधेयक को चयन समिति की सभी सिफारिशों को स्वीकार करते हुए पुनः प्रारुपित किया गया और विचार के लिए राज्यसभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया । 13 दिसंबर, 2011[11] को बहस के दौरान, राज्यसभा के सदस्यों द्वारा पुनः प्रारुपित विधेयक के बारे में निम्नलिखित चिंताएं व्यक्त की गई :

(क) विधेयक या विधेयक से उपाबद्ध उद्देश्यों और कारणों के कथन में यथा वर्णित भारत के उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभागों के गठन के प्रति पर्याप्त

[11] भारत का संसद, उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009, राज्यसभा बहस 13 दिसंबर, 2011, <http://164.100.47.5/newdebate/224/13122011/Fullday.pdf>. पर उपलब्ध ।

तर्कणा दिखाई नहीं पड़ती ।

(ख) विधेयक ने ''वाणिज्यिक विवादों'' से संबंधित और मामलों से उन्हें बोझिल करने के पूर्व लंबित मामलों के निपटान हेतु उच्च न्यायालयों द्वारा वर्तमान में झेली जाने वाली कठिनाइयों पर विचार नहीं किया ।

(ग) विधेयक ने इस तथ्य पर विचार नहीं किया कि उच्च न्यायालय सिविल वादों के निपटान में जिला न्यायालयों से अधिक समय लेते हैं ।

(घ) विधेयक ने अन्य सिविल और आपराधिक मामले जो समानतः महत्वपूर्ण प्रकृति के थे, से अधिक प्राथमिकता उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवादों ने दी ।

(ङ) उच्च न्यायालयों में मूल सिविल अधिकारिता जो उसके पास नहीं था, विहित कर विधेयक मलिमथ समिति और सतीश चन्द्र समिति की सिफारिशों के प्रतिकूल था जिसने उच्च न्यायालयों की मूल अधिकारिता के उत्सादन की सिफारिश की थी ।

(च) वाणिज्यिक प्रभाग में मामलों का निपटान करने के लिए विधेयक में यथा विहित प्रक्रिया संभव नहीं थी और सिविल प्रक्रिया और नैसर्गिक न्याय के सुस्थापित सिद्धांतों का पालन किया गया था ।

(छ) यह प्रतीत होता है कि विधेयक उच्च मूल्य वाणिज्यिक मामलों के लिए एक न्यायपीठ ''आरक्षित'' कर ''विशि-ट वर्ग'' की चिंताओं को प्रतिबिम्बित करता है और सामान्य वादकारी की लागत पर कारपोरेट सेक्टर के हितों की रक्षा कर रहा है ।

1.10 उपरोक्त संक्षेपित इनमें से कुछ चिंताओं पर इस रिपोर्ट के अगले भाग में काफी विस्तार से विचार किया जाएगा ।

ङ. वर्तमान विधि आयोग का अधिदेश

1.11 राज्यसभा के सदस्यों द्वारा व्यक्त की गई चिंताओं को ध्यान में रखते हुए,सरकार ने विधेयक को वापस ले लिया । तत्पश्चात्, विधि और न्याय मंत्रालय ने

पत्र तारीख 7 मार्च, 2013 द्वारा विधेयक को इसके उपबंधों में पाई गई विभिन्न खामियों के आलोक में विधि आयोग को निर्दि-ट किया गया। मंत्रालय के पत्र ने यह मत व्यक्त किया कि कतिपय उपबंध, विशे-ाकर जो ''वाणिज्यिक विवाद'' की परिभा-ा की व्याप्ति से संबंधित है, पर पुनः विचार करने और नए सिरे से अध्ययन करने की आवश्यकता है । तदनुसार प्रस्तावित विधेयक पर विचारों हेतु बीसवें विधि आयोग को एक निर्देश किया गया ।

1.12 वर्तमान रिपोर्ट 2009 विधेयक की पुनः परीक्षा करने और परिवर्तनों के सुझाव की ईप्सा करता है जो उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को कतिपय धनीय सीमा से ऊपर वाणिज्यिक मामलों के विनिश्चय हेतु उच्च न्यायालय में समर्पित न्यायपीठ गठित करने की शक्ति प्रदान करता है। विधेयक की संरचना में कतिपय खामियों को इंगित किया गया है जिसने वर्तमान पुनर्विचार को प्रेरित किया ।

1.13 विधेयक के लिए संशोधनों का सुझाव देने हेतु अध्ययन का कार्य करने के लिए आयोग ने विधेयक में खामियों और आयोग द्वारा प्रस्तावित परिवर्तनों की सूची तैयार करते हुए प्रथम चर्चा पत्र जारी की । यह अध्यक्ष न्यायमूर्ति रविन्द्र भट्ट, न्यायमूर्ति वाल्मीकी जे. मेहता, न्यायमूर्ति राजीव इन्डला सहाय, न्यायमूर्ति एस. के. कथवाला, न्यायमूर्ति गौतम पटेल, श्री नीरज किशन कौल, श्री नितिन ठक्कर, श्री अरुण मोहन, श्री अलोक प्रसन्ना कुमार और सुश्री माधवी दीवान से मिलकर आयोग द्वारा गठित विशे-ाज्ञ समिति को परिचालित किया गया । विचार-विमर्श के दौरान, श्री व्योम डी. शाह, सुश्री नेमिका झा, श्री ब्रजेश रंजन और श्री एन. एस. नप्पीनाई ने भी आयोग की सहायता की ।

1.14 प्राप्त सुझावों और फीड बैक के आधार पर दूसरा चर्चा पत्र प्रारुपित और परिचालित किया गया । इसे बम्बई, मद्रास और दिल्ली बार को टिप्पणियों और सुझावों के लिए भेजा गया । वरि-ठ काउंसेल श्री मिलिन्द साठे (अध्यक्ष, बम्बई बार), श्री रोहित कपाड़िया, श्री नितिन ठक्कर, श्री जनक द्वारकादास और श्री डारिस खंबता को मिलाकर बम्बई बार से उत्तर प्राप्त हुए । वरि-ठ काउंसेल, श्री अरविन्द दातार, श्री एम. एस.

कृ-णन, श्री एम. के. कबीर, अधिवक्ता, श्री एन. एल. राजह, श्री आनन्द वेंकटेश, श्री आनन्द शशिधरन, सुश्री ग्लैडिस डैनियल, श्री अनिरुद्ध कृ-णन और छात्र सुश्री राधा राधवन से मिलकर बने मद्रास के अधिवक्ता समूह द्वारा भी आयोग को लिखित टिप्पणियां और सुझाव भेजे गए थे । दिल्ली बार के श्री राजशेखर राव और श्री करन लहरी ने भी अच्छे सुझाव और टिप्पणियां भेजीं ।

1.15 आयोग श्री आलोक प्रसन्ना कुमार, सुश्री निमिका झा और सुश्री बृन्दा भंडारी, जिनके विचार तीक्ष्ण, महत्वपूर्ण और विशे-ा ध्यानाक-र्ाक थे, की भी विशे-ा प्रशंसा अभिलेख पर लाना चाहता है । इन लोगों ने रिपोर्ट के प्रारुपण में मुख्य भूमिका निभायी।

1.16 इसके पश्चात्, व्यापक विचार-विमर्श, चर्चा और गहन अध्ययन के पश्चात्, आयोग ने इस रिपोर्ट को आकार दिया ।

अध्याय 2

वर्तमान विधेयक की खामियां

क. विधेयक के क्रियान्वयन की कठिनाइयां

2.1 वर्तमान रूप में विधेयक को क्रियान्वित करना कठिन है जिन्हें भारत में व्यवहार्य वाणिज्यिक न्यायालय प्रणाली की व्यवस्था के लिए सुधारे जाने की आवश्यकता है । इनमें से कुछ कठिनाइयों की नीचे चर्चा की जा रही है ।

(i) सभी उच्च न्यायालयों में आरंभिक अधिकारिता की कमी

2.2.1 इस समय केवल पांच उच्च न्यायालय - बम्बई उच्च न्यायालय, कलकत्ता उच्च न्यायालय, हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय और मद्रास उच्च न्यायालय के पास आरंभिक सिविल अधिकारिता है । यह प्रतीत होता है कि वर्तमान विधेयक, जहां तक विनिर्दि-ट मूल्य से अधिक मूल्य के वाणिज्यिक विवादों का संबंध है, उच्च न्यायालय में स्वयं आरंभिक अधिकारिता निहित करने की शक्ति प्रदान करता है । यह दो कारणों से समस्यात्मक है ।

2.2.2 पहला, किसी उच्च न्यायालय के लिए स्वयं में अधिकारिता निहित करने की कानूनी शक्ति प्रदान करना अप्रत्याशित है । संविधान के आधार पर न्यायालय में अधिकारिता निहित की जाती है क्योंकि सी.पी.सी. और अन्य ऐसे विधानों जैसे कानूनों द्वारा भारत के उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में निहित की गई है । क्योंकि विधेयक के खंड 4 और 11 के साथ पठित खंड 3 के आधार पर, उच्च वाणिज्यिक प्रभाग को गठित करने के विवेकाधिकार के प्रयोग के परिणामस्वरूप, विनिर्दि-ट मूल्य से अधिक के वाणिज्यिक विवादों से संबंधित सभी विद्यमान सिविल वाद उच्च न्यायालय को अंतरित हो जाएंगे ।

2.2.3 दूसरा, वे उच्च न्यायालय जिनके पास इस समय आरंभिक अधिकारिता नहीं है अर्थात्, उपरोक्त वर्णित पांच उच्च न्यायालयों के अलावा सभी उच्च न्यायालय, को नियमों और प्रक्रियाओं के नए सेट को प्रख्यापित करने और लागू

करने के लिए अतिरिक्त भार सहन करना होगा और वाणिज्यिक वादों से निपटने के लिए अतिरिक्त अवसंरचना निर्मित करना होगा ।

2.2.4 अतः, यह रिपोर्ट सिफारिश करती है कि यथास्थिति, उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय गठित करने की शक्ति केंद्रीय सरकार में निहित होगी ।

(ii) एक ही न्यायालय के भीतर भिन्न-भिन्न धनीय अधिकारिताएं

2.3.1 आंरभिक सिविल अधिकारिता रखने वाले उच्च न्यायालयों की अधीन अधिकारिता में काफी अंतर है । जहां दिल्ली उच्च न्यायालय[12] की धनीय अधिकारिता 20 लाख या अधिक है वहीं मद्रास उच्च न्यायालय[13] और हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय[14] की धनीय अधिकारिता क्रमशः 25 लाख और 10 लाख से अधिक है । कलकत्ता उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता को 10 लाख रुपए से बढ़ाकर एक करोड़ रुपए की गई है किंतु यह सिटी सिविल न्यायालय[15] की अधिकारिता के समवर्ती है । व-र्ा 2012[16] में किए गए संशोधन के परिणामस्वरूप बम्बई उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता को 50,000/-रु. से बढ़ाकर एक करोड़ रुपए की गई है । उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता वृद्धि की सिफारिश किए बिना सिविल मामले में वाणिज्यिक विवादों के लिए एक करोड़ या अधिक का मूल्य विनिर्दि-ट कर, विधेयक बेतुका स्थिति पैदा करता है । चूंकि कम मूल्य वाले मामलों को उच्च न्यायालय से बाहर अंतरित करने का कोई उपबंध नहीं है इसलिए यह हमें ऐसी स्थिति में डाल देता है जहां एक ही प्रकार के मामलों पर विचार करने वाला एक ही उच्च न्यायालय इस आधार पर दो भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएं लागू करता है कि क्या वे ''विनिर्दि-ट मूल्य'' से अधिक के हैं या नहीं ।

---

12 दिल्ली उच्च न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 2003

13 तमिलनाडु सिविल न्यायालय और चेन्नई सिटी सिविल न्यायलय (संशोधन) अधिनियम, 2010.

14 हिमाचल प्रदेश न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 2001.

15 पश्चिमी बंगाल सिटी सिविल न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 2013.

16 बम्बई सिटी सिविल न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 2012.

उदाहरणार्थ, 99 लाख रुपए के विनिर्दि-ट मूल्य के मद्रास उच्च न्यायालय में लंबित वाणिज्यिक विवाद वाणिज्यिक प्रभाग के समक्ष नहीं प्रस्तुत किए जाएंगे किंतु एक करोड़ रुपए के मूल्य वाले समरुप तथ्यों और समरुप मुद्दों वाले (और संभवतः उन्हीं पक्षकारों के बीच) वाणिज्यिक विवाद को स्वतः वाणिज्यिक प्रभाग के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा ।

2.3.2 उच्च न्यायालय के भीतर एक ही तरह के मामलों को एकमात्र उनके तात्पर्यित मूल्यांकन के आधार पर पृथक् करना संविधान के अनुच्छेद 14 के अधीन गैर-विभेद की कसौटी को उत्तीर्ण करने के भी समान है विशे-ाकर चूंकि मामलों के सेट के लिए अन्य से अधिक द्रुत प्रक्रिया अपनाई जाएगी ।

2.3.3 इसके अतिरिक्त, यदि वाणिज्यिक प्रभाग उनके मूल्य को ध्यान दिए बिना सभी वाणिज्यिक विवादों को निपटाता है तो मामलों की अधिक विचाराधीनता के कारण प्रणाली के चालू रहने की संभावना नहीं है । एक करोड़ रुपए से ऊपर वाले पूरे राज्य के सभी वाणिज्यिक विवादों की सुनवाई करने की अधिकारिता उच्च न्यायालयों में निहित करने से उनके विद्यमान भार में वृद्धि होगी और परिणामस्वरूप उच्च न्यायालयों द्वारा इन मामलों के निपटान में और विलंब ही होगा ।

(iii) मामलों की अधिक विचाराधीनता

2.4.1 उच्चतम न्यायालय के बेवसाइट पर सार्वजनिक रूप से उपलब्ध नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, भारत के उच्च न्यायालयों में सिविल मामलों की विचाराधीनता इस प्रकार है :

सारणी 2.1 : 31.03.2014 को सभी उच्च न्यायालयों में 'सिविल मामलों' की विचाराधीनता

क्रम सं.	उच्च न्यायालय का नाम	तिमाही के अंत में सिविल मामलों की विचाराधीनता	1.1.2014 से विचाराधीनता में कुल प्रतिशत वृद्धि या कमी (ऋण चिह्न कमी दर्शित करता है)
1.	इलाहाबाद	69541	1.10

2.	आंध्र प्रदेश	201425	1.43
3.	बम्बई	299931	1.06
4.	कलकत्ता	230317	-8.47
5.	छत्तीसगढ़	29420	-4.26
6.	दिल्ली	49000	0.77
7.	गुजरात	51384	0.73
8.	गुवाहाटी	33534	2.09
9.	त्रिपुरा	4743	-0.55
10.	मेघालय	1114	0.42
11.	मणिपुर	3761	5010
12.	हिमालच प्रदेश	54015	1.77
13.	जम्मू और कश्मीर	87794	3.14
14.	झारखंड	38001	1.93
15.	कर्नाटक	179379	3.03
16.	केरल	99573	1.20
17.	मध्य प्रदेश	174665	0.30
18.	मद्रास	490383	3.00
19.	उड़ीसा	168794	- 43.50
20.	पटना	79896	0.13
21.	पंजाब और हरियाणा	200549	2.50
22.	राजस्थान	244020	-1.25
23.	सिक्किम	95	36.36
24.	उत्तराखंड	15269	3.10
कुल		**3432493**	**-2.91**

टिप्पण - यद्यपि 6, चंडीगढ़ और पंजाब तथा हरियाणा उच्च न्यायालय के आंकड़े एक ही उच्च न्यायालय के हैं, फिर भी उन्हें ''न्यायालय समाचार'' प्रकाशन में अलग-अलग दर्शाया गया है और उसे ही यहां प्रतिबिम्बित किया गया है ।

अतः, इस समय, हम यह पाते हैं कि 34, 32, 493 सिविल मामले भारत के सभी 24 उच्च न्यायालयों में लंबित हैं ।

2.4.2 विधि आयोग ने भी व-र्ा 2003 और 2013 के बीच सिविल वादों की विचाराधीनता के संबंध में आरंभिक अधिकारिता वाले पांच उच्च न्यायालयों से जानकारी मांगी थी । उच्च न्यायालयों द्वारा उपलब्ध पिछले दस व-र्ों की वार्-िक

फाइलिंग और निपटान के विश्ले-ण वाली सारणी 2 से यह दर्शित होता है कि कलकत्ता और बम्बई उच्च न्यायालयों के सिवाय सभी अन्य उच्च न्यायालयों (अर्थात् दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और मद्रास उच्च न्यायालय) में सिविल वादों की विचाराधीनता में लगातार वृद्धि दिखाई दे रही है । तथापि, बम्बई उच्च न्यायालय में विचाराधीनता की कमी उसकी धनीय अधिकारिता में 50,000/- रुपए से एक करोड़ रुपए की वृद्धि के परिणामस्वरूप है[17] क्योंकि इसके कारण कई वाद सिटी सिविल न्यायालयों को अंतरित किए गए थे । सिविल वादों की बाबत उच्च न्यायालयों से अभिप्राप्त आंकड़ों के अनुसार विचाराधीनता की स्थिति इस प्रकार है :

सारणी 2.2 : आरंभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालयों में व-र्ा 2003, 2008 और 2013 में लंबित सिविल वादों की तुलना

क्र. सं.	उच्च न्यायालय	व-र्ा की समाप्ति पर लंबित सिविल वादों की कुल संख्या		
		2003	**2008**	**2013**
1.	बम्बई	42293	41765	6081
2.	कलकत्ता	10623	7879	6932
3.	दिल्ली	7853	7815	12963
4.	हिमाचल प्रदेश	195	365	354
5.	मद्रास	4300	6249	6326
	कुल	**65,264**	**64,073**	**32,656**

[17] बम्बई उच्च न्यायालय के संदर्भ में, एक व-र्ा में 32.40% की अननुपातिक वृद्धि धनीय अधिकारिता में एक करोड़ की वृद्धि के क्रियान्वयन द्वारा कारित व्यावहारिक कठिनाइयों द्वारा किया गया माना जा सकता है ।

सारणी 2.3 : आरंभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालय में 2012 और 2013 में सिविल वादों की विचाराधीनता की तुलना

उच्च न्यायालय	वर्ष 2012 की समाप्ति पर लंबित सिविल वादों की कुल संख्या	वर्ष 2013 की समाप्ति पर लंबित वादों की कुल संख्या	विचाराधीनता में प्रतिशत वृद्धि या कमी
बम्बई	4592	6081	32.40[17]
कलकत्ता	7206	6932	-3.80
दिल्ली	12455	12963	4.07
हिमाचल प्रदेश	574	354	-31.35
मद्रास	5900	6326	7.22
कुल	**30,727**	**32,656**	**6.27**

2.4.3 कुल मिलाकर, आरंभिक अधिकारिता वाले पांच उच्च न्यायालयों में 32,656 सिविल वाद लंबित हैं । वस्तुतः, पूर्व वर्ष में यह विचाराधीनता में 6.27% वृद्धि द्योतित करता है जैसा यह उपरोक्त सारणी 3 से सुस्प-ट है ।

2.4.4 यह उल्लेखनीय है कि उपरोक्त उच्च न्यायालयों के आरंभिक पक्ष के मामलों में माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन माध्यस्थम् अपीलें और माध्यस्थम् याचिकाएं सम्मिलित है । तथापि, ''सिविल वाद'' की तरह ऐसी अपीलों और याचिकाओं के प्रतिपादन में कोई समरुपता नहीं है । बम्बई उच्च न्यायालय में, माध्यस्थम अपीलों और याचिकाओं को ''सिविल वाद'' के रूप में वर्गीकृत किया गया है जबकि दिल्ली उच्च न्यायालय में, उन्हें ''सिविल वाद'' के रूप में निश्चित रूप से माने बिना ''आरंभिक पक्ष'' मामले के रूप में वर्गीकृत किया

गया है ।

2.4.5 विधि आयोग ने व-र्ा 2009 विधेयक में वर्तमान परिभा-ित "वाणिज्यिक विवादों" की विचाराधीनता के संबंध में आरंभिक अधिकारिता वाले पांच उच्च न्यायालयों से आंकड़े भी मांगे हैं । नौ विनिर्दि-ट प्रश्नों की प्रश्नावली ऐसे पांच उच्च न्यायालयों को भेजे गए थे जिनके पास इस समय अन्य बातों के साथ-साथ सिविल वादों की विचाराधीनता और वाणिज्यिक विवादों की संख्या से संबंधित मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता है । 31.12.2013 को, पांच उच्च न्यायालयों के रजिस्ट्रार द्वारा भेजे गए आंकड़े इस प्रकार हैं ।

सारणी 2.4 : आरंभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालय में "वाणिज्यिक विवादों" की विचाराधीनता

उच्च न्यायालय	**लंबित वादों की कुल संख्या**	**लंबित वाणिज्यिक विवादों की कुल संख्या**	**सिविल वादों की वाणिज्यिक विवादों से प्रतिशतता**
बम्बई	6081	1997	32.83%
कलकत्ता	6932	5352	77.20%
दिल्ली	12963	3582	27.63%
हिमाचल प्रदेश	354	88	24.8%
मद्रास	6326	5865	92.71%
कुल	**32656**	**16884**	**51.7%**

2.4.6 भारत की आरंभिक अधिकारिता वाले पांच उच्च न्यायालयों में लंबित कुल 32,656 सिविल वादों से हम यह पाते हैं कि आधे से थोड़ा अधिक (16,884) या उनमें से 51.7% वाणिज्यिक विवाद हैं । यह आंकड़ा काफी अधिक हो सकता है यदि 35,072 वाद व-र्ा 2012 में बम्बई उच्च न्यायालय से अंतरित नहीं किया गया होता जब उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता की सीमा एक करोड़ रुपए

और अधिक नहीं बढ़ाई गई होती ।[18]

2.4.7 मामलों की भारी विचाराधीनता का एक कारण इन उच्च न्यायालयों में आरंभिक पक्ष के आबंटित न्यायाधीशों की कमी हो सकती है । आरंभिक पक्ष में प्रति न्यायाधीश लंबित मामलों की संख्या की सरसरी तौर पर परीक्षा से यह दर्शित होता है कि न्यायाधीश कुल मिलाकर इस तथ्य के कारण अधिक बोझिल हैं कि आरंभिक पक्ष के लिए पर्याप्त न्यायाधीश आबंटित नहीं किए जाते हैं । सभी पांच उच्च न्यायालयों में आरंभिक पक्ष अधिकारिता में न केवल सिविल वाद सम्मिलित हैं बल्कि मामलों के अन्य प्रवर्गों के साथ-साथ रिट याचिकाएं, माध्यस्थम् याचिकाएं और अपीलें, निर्वाचन अर्जियां, सिविल अवमान याचिकाएं और वसीयती मामले भी सम्मिलित हैं । जहां इन सभी उच्च न्यायालयों में आरंभिक पक्ष अधिकारिता की व्याप्ति एक समान नहीं है, फिर भी असलियत यह है कि सिविल वाद ही आरंभिक पक्ष अधिकारिता का भाग गठित करते हैं। निम्नलिखित सारणी में प्रत्येक उच्च न्यायालय में लंबित आरंभिक पक्ष मामलों की संख्या को सूचीबद्ध किया गया है ।

सारणी 2.5 : 31.12.2013 को आरंभिक सिविल अधिकारिता वाले प्रत्येक उच्च न्यायालय में लंबित आरंभिक पक्ष मामलों की कुल संख्या

उच्च न्यायालय	**लंबित आरंभिक पक्ष मामलों की कुल संख्या**
बम्बई	47924
कलकत्ता	36087
दिल्ली	17597
हिमाचल प्रदेश	3734
मद्रास	41702
कुल	**147044**

2.4.8 मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आंकड़े के अनुसार केवल चार

[18] यह बम्बई उच्च न्यायालय द्वारा विधि आयोग को दिए गए आंकड़े पर आधारित है ।

न्यायाधीश (उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति सहित) 1.1.2013 से 31.12.2013 के बीच आरंभिक पक्ष के लंबित 41,702 मामलों के लिए आबंटित किए गए थे ।[19] यदि इन सभी न्यायाधीशों को वाणिज्यिक विवादों (सारणी 4 के अनुसार) से संबंधित 5,865 लंबित सिविल वादों को निपटाने के लिए ही लगाया गया होता तो अब भी प्रत्येक न्यायाधीश से लगभग 1,467 मामलों की सुनवाई करने की अपेक्षा होती ।

2.4.9 बम्बई उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आंकड़ों के अनुसार यद्यपि पंद्रह से अठारह न्यायाधीशों को आरंभिक पक्ष कार्य के लिए आबंटित किया गया था फिर भी तीन से आठ न्यायाधीशों से अधिक न्यायाधीश अनन्यतः आरंभिक पक्ष के कार्य को नहीं निपटा रहे थे । यदि हम यह मानें कि शे-न दस न्यायाधीशों ने अपने समय का विभाजन आरंभिक पक्ष और अपीली पक्ष कार्य के लिए समानतः किया तो हम आठ से तेरह न्यायाधीशों के आंकड़े पर पहुंचते हैं । संगणना के प्रयोजनों के लिए यदि हम इस आंकड़े का औसत निकालते हैं और यह अनुमान लगाएं कि लगभग ग्यारह न्यायाधीश आरंभिक पक्ष के कार्य (47,924 मामला) को निपटा रहे थे तो अब भी हम यह पाते हैं कि प्रत्येक न्यायाधीश के पास व-र्ा के दौरान फाइल पर लगभग 4,356 आरंभिक पक्ष मामले थे । इसमें न केवल सिविल वाद सम्मिलित हैं बल्कि आरंभिक पक्ष में प्रस्तुत की गई रिट याचिकाएं भी हैं ।

2.4.10 अतः, उपरोक्त आंकड़े से यह सुस्प-ट है कि अधिकांश उच्च न्यायालय रिट याचिका, माध्यस्थम् मामला, आदि सहित आरंभिक पक्ष के मामलों की काफी विचाराधीनता के मुद्दे का अब भी सामना कर रहे हैं और पिछले दशक से विचाराधीनता में कमी करने में सक्षम नहीं हो रहे हैं । भारत में न्यायालयों की वृद्धि करने के बजाए, ऐसे उच्च न्यायालयों में सिविल वादों की धनीय अधिकारिता सीमा में वृद्धि कर मामलों की संख्या में कमी करने पर फोकस करना चाहिए ।

[19] यहां यह उल्लेखनीय है कि मद्रास उच्च न्यायालय रिट याचिकाओं को "आरंभिक पक्ष मामलों" के रूप में वर्गीकृत नहीं करता ।

बम्बई और कलकत्ता उच्च न्यायालयों की अधिकारिता को पहले ही बढ़ाकर एक करोड़ रुपए कर दिया गया है । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि इस आयोग द्वारा सिफारिश किए गए नए विधेयक के प्रयोजनों के लिए वाणिज्यिक विवादों को उन मामलों के रूप में परिभाषित किया जाए जिनका विनिर्दिष्ट मूल्य एक करोड़ रुपए से अधिक है, तो यह वांछनीय है कि सभी पांच उच्च न्यायालयों की एक करोड़ रुपए की धनीय अधिकरिता समरुप होनी चाहिए ।

2.4.11 दिल्ली उच्च न्यायालय (संशोधन) विधेयक, 2014 इस समय संसद् के समक्ष विचारार्थ लंबित है और यदि इसे इसके वर्तमान रूप में पारित किया जाता है तो यह दिल्ली उच्च न्यायालय की आरंभिक सिविल अधिकारिता को बढाकर दो करोड़ रुपए करेगा ।[20] तथापि, यह विधेयक के क्रियान्वयन में विसंगति पैदा करेगा क्योंकि यह एक करोड़ और दो करोड़ के बीच मूल्य वाले वाणिज्यिक विवादों को विनिश्चित करने के लिए दिल्ली में वाणिज्यिक विवाद गठित करना संभव नहीं हो सकेगा । निश्चित ही ऐसे वादों की सुनवाई साधारणतः नियमित सिविल न्यायालयों द्वारा की जाएगी । फिर भी, यदि यह स्वीकार कियाजाए कि एक करोड़ रुपए से अधिक मूल्य वाले विवादों में उच्च तकनीकी मुद्दे अंतवर्लित होने की संभावना है और ऐसे न्यायाधीशों द्वारा विनिश्चित किया जाए जिनके पास ऐसे विवादों को निपटाने की विशेषज्ञता है तो नियमित सिविल न्यायालयों द्वारा विनिश्चित किए जाने हेतु ऐसे विवादों को निपटान दिल्ली के मामले में बेतुका होगा । अतः, विधेयक के उद्देश्य को प्राप्त करने और ऐसी विसंगतियां घटित होने से निवारित करने के लिए, सरकार दिल्ली उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता एक करोड़ रुपए तक बढ़ाने पर विचार कर सकती है जिससे कि पांच उच्च न्यायालयों में एकरुपता लाई जा सके ।

2.4.12 इस प्रक्रम पर, वाद के मूल्य पर आधारित वाणिज्यिक विवादों की विचाराधीनता के आंकड़े पर ध्यान देना शिक्षाप्रद है :

[20] दिल्ली उच्च न्यायालय (संशोधन) विधेयक, 2014.

सारणी 2.6 : मूल्य आधारित आंरभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालयों में लंबित वाणिज्यिक विवादों का ब्यौरा इस प्रकार है :

उच्च न्यायालय	मूल्य पर आधारित वाणिज्यिक विवादों की विचाराधीनता				लंबित वाणिज्यिक विवादों की कुल सं.	एक करोड़ से अधिक वाले मामलों की कुल सं.
	एक करोड़ से कम	एक करोड़ से दो करोड़ के बीच	दो करोड़ से पांच करोड़ के बीच	पांच करोड़ और अधिक		
बम्बई	721	433	381	462	1997	1276
कलकत्ता	2851	583	308	842	5352	1733
दिल्ली	3346	101	73	62	3582	236
हिमाचल प्रदेश	68	8	8	4	88	20
मद्रास	6020	463	274	221	6978	958

2.4.13 यदि दिल्ली उच्च न्यायालय, कलकत्ता उच्च न्यायालय, मद्रास उच्च न्यायालय[21] और हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की धनीय अधिकारिता को बढ़ाकर एक करोड़ रुपए किया जाए तो वाणिज्यिक विवादों वाले सिविल वादों की विचाराधीनता में सारतः क्रमशः 93.5%, 58.7%, 86% और 72% की कमी आएगी।

(iv) मामलों के निपटान में विलंब और बकाया

2.5.1 उपरोक्त संकेतिक विचाराधीनता की समस्याओं को मामलों के निपटान के विलंब और बकायों के संदर्भ में देखना होगा । विचाराधीनता आंकड़े भागतः जनसंख्या के आकार और न्यायाधीशों की संख्या जैसे विभिन्न कारकों के उत्पाद हैं - इस प्रकार बम्बई में लंबित मामलों की संख्या हमेशा हिमाचल प्रदेश में लंबित मामलों की संख्या से अधिक होगी । उच्च न्यायालयों में बकायों और मामलों के

[21] मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आंकड़े में माध्यस्थम् याचिका सम्मिलित है । तथापि, ऐसे माध्यस्थम् याचिकाओं की संख्या के बारे में न्यायालय द्वारा कोई ब्यौरा नहीं दिया गया जिससे कि "वाणिज्यिक विवाद" की गणना की जा सके ।

निपटान में लंबित की समस्या की गंभीरता को समझने के लिए विधि आयोग ने आरंभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालयों से ऐसी कालावधि जब से वाद लंबित हैं, ऐसे वादों के ब्यौरे जो दो व-र्ा से कम समय से, दो से पांच व-र्ा के बीच, पांच से दस व-र्ाों के बीच और दस व-र्ाों से अधिक समय से लंबित है, से संबंधित आंकड़ों की मांग की । इस आंकड़े को नीचे सारणी में दर्शित किया गया है :

सारणी 2.7 : आरंभिक अधिकारिता वाले प्रत्येक उच्च न्यायालय में सिविल वादों के निपटान में विलंब का विश्ले-ाण

उच्च न्यायालय	लंबित सिविल वादों की कुल संख्या	विचाराधीनता की अवधि के आधार पर लंबित सिविल वादों की संख्या				दो व-र्ा से अधिक समय से लंबित सिविल वादों की प्रतिशतता
		दो व-र्ा से कम	दो से पांच व-र्ा के बीच	पांच से दस व-र्ा के बीच	दस व-र्ा से अधिक	
बम्बई	6081	1268	1268	1159	2386	7.14
कलकत्ता	6932	787	800	1320	4025	88.6
दिल्ली	12693	4707	4151	2849	1256	63.66
मद्रास	6326	1536	1451	2196	1143	75.72
हिमाचल प्रदेश	354	75	105	75	99	78.82
कुल	**32386**	**8373**	**7775**	**7599**	**8909**	**74.99**

2.5.2 उपरोक्त आंकड़ों के विश्ले-ाण से यह दर्शित होता है कि 32,386 लंबित सिविल वादों में से, 16,500 वाद या 50.97% पांच व-र्ा से अधिक समय से लंबित हैं । कलकत्ता उच्च न्यायालय की समस्या विशि-ट जटिल लगती है जहां दस व-र्ाों में सिविल वादों की विचाराधीनता में कमी होने के बावजूद अब भी ऐसे मामलों की काफी अधिक प्रतिशतता है जो दस या अधिक व-र्ाों से लंबित है, जैसाकि सारणी 2, 3 और 7 को मिलाकर पढ़ने से सुस्प-ट है ।

2.5.3 विधि आयोग ने अपनी 188वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि दूसरे पक्ष को तामीली के पूरा होने की तारीख से दो व-र्ा की समय सीमा में सिविल वादों का निपटान किया जाए ।[22] अतः यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दो व-र्ा से कम समय से संबंधित वाद समस्या के भाग नहीं है, यद्यपि यह दो व-र्ा से कम समय तक लंबित मामले के प्रकार पर भी निर्भर करेगा । किसी भी दशा में, दो व-र्ा से अधिक समय से लंबित रहने वाले उन वादों की ओर अपना ध्यान केंद्रित करने पर हम यह पाते हैं कि लगभग 75% वाद इतने समय से लंबित है और उन्हें ''विलंबित'' के रूप वर्गीकृत किया जा सकता है ।

2.5.4 विधि आयोग ने बकाया और पिछला ढेर के निपटान हेतु अतिरिक्त ''मानव शक्ति की सृजन की आवश्यकता'' पर अपनी 245वीं रिपोर्ट में भी ''बकाया'' और ''विलंब'' के बीच विभेद किया । ''बकाया'' तब ''विलंब'' की उपछाया है जब अप्रत्याशित कारणों से मामले में विलंब होता है ।[23] वर्तमान मामले में, यदि हम यह कल्पना करे कि पांच व-र्ा तक के विलंबित सभी वाद व्यापकतः न्यायोचित कारणों से विलंबित हुए (जो सत्य नहीं हो सकता है) तो अब भी वादों की ऐसी काफी संख्या है (50% से अधिक) जो ''बकाया'' गठित करता है और जो युक्तियुक्त सीमाओं से परे विलंबित लगता है ।

2.5.5 अतः, यह तर्कसंगत है कि सिविल वाद, विशे-ाकर जो वाणिज्यिक विवादों से संबंधित हैं, के दक्षपूर्ण और प्रभावी निपटान के लिए अनन्य वाणिज्यिक प्रभाग सृजित करने का कोई प्रयास तभी सफल होगा यदि उच्च न्यायालय के आरंभिक धनीय अधिकारिता को उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवादों तक ही निर्बंधित नहीं किया जाता ।

(v) उच्च न्यायालय के भीतर लंबित मामलों को एक दूसरे न्यायालय मं अंतरण

[22] भारत का विधि आयोग, 188वीं रिपोर्ट पूर्वोक्त टिप्पण 1, पृ-ठ 176-177.

[23] भारत का विधि आयोग बकाया और पिछले ढेर के निपटान हेतु अतिरिक्त मानव शक्ति का सृजन रिपोर्ट सं. 245 (2014), पृ-ठ 3-4 (इसमें इसके पश्चात् ''भारत का विधि आयोग'', 245वीं रिपोर्ट).

2.6.1 उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक विवादों की आरंभिक अधिकारिता निहित करने और ऐसे सभी मामलों को उच्च न्यायालय में अंतरित करने से वादकारियों के लिए अतिरिक्त समस्या पैदा होगी ।

2.6.2 बम्बई उच्च न्यायालय जैसे आरंभिक अधिकारिता वाले उच्च न्यायालय में आरंभिक अधिकारिता मुंबई शहर की नगरपालिक सीमा तक सीमित है । मद्रास और कलकत्ता उच्च न्यायालयों के मामले में आरंभिक अधिकारिता का राज्यक्षेत्रीय पहलू भी क्रमशः चेन्नई और कोलकता शहर की विनिर्दि-ट राज्यक्षेत्रीय सीमाओं तक सीमित है । तथापि, विधेयक संपूर्ण राज्य तक आरंभिक अधिकारिता की राज्यक्षेत्रीय पहुंच विस्तारित करने और तदद्वारा नाटकीय ढंग से मामलों की संख्या में वृद्धि होने और वादकारियों पर भी भार डालने का प्रस्ताव करता है । इस समय, उदाहरणार्थ, पुणे में स्थित पक्षकारों के बीच एक करोड़ रुपए से अधिक के वाणिज्यिक विवाद स्वयं पुणे में जहां वाद हेतुक उद्भूत होता है स्थित समुचित सिविल न्यायालय में फाइल किए जाएंगे । तथापि, 2009 विधेयक के अनुसार ऐसे वाद को निश्चय ही बम्बई उच्च न्यायालय के प्रधान पीठ में फाइल करना होगा क्योंकि विधेयक ऐसे वादों की बाबत अनन्यत अधिकारिता उनमें निहित करता है । परिणामतः, वादकारियों को ऐसे वादों के लिए अतिरिक्त यात्रा और अन्य व्यय झेलना होगा । अतः उच्च न्यायालय को विद्यमान वादों को अंतरित करने का प्रस्ताव अव्यवहार्य है ।

ख. प्रक्रियात्मक उपबंधों की कठिनाइयां

2.8 विधेयक के खंड 9 में अंतर्वि-ट प्रक्रियागत उपबंधों में भी खामियां है जो वाणिज्यिक विवादों के निपटान के प्रयोजनों के लिए उनका पालन करना असंभव बनाती है ।

(i) अव्यवहार्यता

2.9.1 खंड 9 जो प्रक्रियागत उपबंधों को सूचीबद्ध करता है और जो

वाणिज्यिक प्रभाग के समक्ष वाणिज्यिक विवाद के विचारण को लागू होता है, में कई खामियां हैं जो विधेयक के क्रियान्वयन में समस्याएं पैदा करती हैं । इनका उल्लेख नीचे किया गया है ।

2.9.2 पहला, यद्यपि विधेयक के उपबंध सी.पी.सी. पर अभिभावी होते हैं फिर भी इसमें कोई स्प-टता नहीं है कि क्या वे ऐसे उच्च न्यायालयों के आरंभिक पक्ष नियमों पर अभिभावी होंगे जिनके पास ऐसी आरंभिक अधिकारिता है । **विद्यावती गुप्ता** बनाम **शक्ति हरिनायक**[24] वाले मामले में उच्चतम न्यायलय ने यह स्प-ट किया कि उच्च न्यायालय और सी.पी.सी. के नियमों के बीच विरोध की दशा में उच्च न्यायालय के नियम प्रभावी होंगे । 2009 विधेयक यह स्प-ट किए बिना कि विरोध की दशा में विधेयक या उच्च न्यायालय के नियम अभिभावी होंगे, प्रक्रियागत नियमों के एक अतिरिक्त सेट का उपबंध करता है ।

2.9.3 दूसरा, प्रतिवादियों द्वारा दावे स्वीकार करने या खंडन करने हेतु आगे आने के पहले ही खंड 9 के उपखंड (2)(क)(iii) और (iv) द्वारा यथापेक्षित मामले के फाइल करने के समय वादी और साक्षियों के शपथपत्रों को फाइल करने की अपेक्षा अव्यवहार्य है जो वादकारियों पर अनावश्यक बोझ है । इसी प्रकार, प्रतिवादी से उत्तर फाइल करते समय साक्षियों के कथन फाइल करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती जब पक्षकारों के बीच मतभेद के बिंदुओं की जानकारी नहीं है ।

2.9.4 तीसरा, इसी प्रकार प्रतिवादी द्वारा उत्तर फाइल करने के पूर्व ही खंड 9 के उपखंड 2(क)(v) के अधीन प्रारुप विवाद्यकों पर कथन की अपेक्षा करना अव्यवहार्य है ।

2.9.5 अंततः, जहां खंड 9 न्यायाधीश द्वारा "मामला प्रबंध सम्मेलन" आयोजित किए जाने का उपबंध करता है वहीं विधेयक पर्याप्त विशि-टियों का उपबंध नहीं करता कि कैसे मामला प्रबंध सम्मेलन आयोजित किया जाए अर्थात्

[24] (2006) 2 एस. सी. सी. 777.

विचारण के अनुक्रम में नई प्रक्रिया सम्मिलित की जा रही है । इसके अतिरिक्त, यह अपनाए जाने वाली प्रक्रिया क्या ऐसा सम्मेलन मामले की पृथक् सुनवाई गठित करेगा या चैम्बर में किया जाए, को विस्तार से उपदर्शित नहीं करता । यह सम्मेलन संचालित करते समय न्यायाधीश की शक्ति, अननुपालन का परिणाम और ऐसे मामलों में वांछित और प्रत्याशित परिणामों को उपदर्शित नहीं करता । "मामला प्रबंध सम्मेलन" का विभिन्न अधिकारिताओं में विभिन्न अभिप्राय है और क्योंकि यह भारत में पहली बार लाया जा रहा है, इसलिए भारतीय संदर्भ में पद के अर्थ और व्याप्ति को स्प-ट करना आवश्यक है ।

(ii) उच्चतम न्यायालय को सीधे अपील संभव नहीं है

किसी विधि, नियम या उपबंध के होते हुए भी, विधेयक वाणिज्यिक प्रभाग से सीधे उच्चतम न्यायालय को अपील करने का उपबंध करता है । वस्तुतः, यह प्रत्येक मामले में उच्चतम न्यायालय को प्रथम अपील में परिवर्तित करता है और अंतरिम, अंतवर्ती आवेदनों को भी उच्चतम न्यायालय के समक्ष फाइल करने से पक्षकारों पर भार डालता है तथा और अपीलें विनिश्चित करने के कारण उच्चतम न्यायालय के भार (और विचाराधीनता) में भी वृद्धि करता है । यह विलंब में वृद्धि करेगा क्योंकि वाणिज्यिक मामले अंतरिम आदेश और अंतिम अपील के समाधान दोनों की दशा में विपद ग्रस्त होंगे चूंकि वाणिज्यिक प्रभाग के प्रत्येक एकल आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय के समक्ष की जा सकती है (और, अनिवार्यतः की जाएगी) । विवाद समाधान प्रक्रिया और खर्चीली, समय खपाऊ और कम प्रभावी हो जाएगी ।

ग. मुकदमा के संचालन की रीति में परिवर्तन का विरोध

2.11 जहां विधेयक का लक्ष्य भारत में मुकदमा संचालित किए जाने की गति में सुधार करना है वहीं यह भारत में मुकदमेबाजी की संस्कृति को मूल रूप से परिवर्तित करने का प्रयास नहीं करता । अभिवचन फाइल करने की समय-सीमा को कम करने

और अपील हेतु केवल ही एक मंच अनुज्ञात करने जैसे प्रस्तावित परिवर्तन अधिक सौन्दर्यवर्द्धक प्रकृति के हैं और विलंब के आधारिक कारण का उपचार नहीं करते । निश्चित ही विधेयक भारतीय सिविल न्याय परिदान तंत्र में किसी यथार्थ और सारवान परिवर्तन का प्रस्ताव नहीं करता । इस बात की काफी संभावना है कि प्रस्तावित परिवर्तनों के बाद भी विद्यमान खामियां वाणिज्यिक प्रभाग में भी बनी रहेंगी जो उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभाग के ''त्वरित निपटान'' प्रयोजन को विफल करेंगी ।

2.12 इस समय, स्थगन काफी बारंबार मंजूर किए जाते हैं और ऐसे अधिवक्ताओं को कोई परिणाम नहीं भुगतना पड़ता जो अनावश्यक रूप से मामले में विलंब के उत्तरदायी हैं । वस्तुतः, प्रति सुनवाई फीस प्रभारित करने की वर्तमान संस्कृति अधिवक्ताओं को मामले में विलंब के लिए प्रेरित करती है । कभी-कभी खर्चा अधिरोपित किए जाने और इसका मामले के वास्तविक व्यय से कोई संबंध न होने के कारण, वादकारियों को दंडित होने और बारंबार विलंबकारी युक्तियों में लिप्त होने से बिल्कुल भय नहीं होता ।

2.13 अनेक मामलों में और अभी हाल ही में 2014 में **सुब्रतो राय सहारा** बनाम **भारत संघ**[25] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा इस तथ्य को सुस्थापित किया गया और जहां न्यायालय ने इस तथ्य की अवेक्षा की कि सुनवाई में विलंब और बार-बार आदेश पारित करने के कारण न्यायालय समय के दौरान और उसके बाद काफी ''न्यायाधीश समय'' खपत हो जाता है और परिणामतः न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग होता है । इस संदर्भ में यह मत व्यक्त किया गया:[26]

> ''भारतीय न्यायिक प्रणाली निरर्थक मुकदमों से काफी बोझिल है । निरर्थक और दुर्विचारित दावों के प्रति वादकारियों को अपने सम्मोहक सनक से बचाने के लिए साधन विकसित करने की आवश्यकता है । प्रत्येक व्यक्ति को यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि मुकदमे की प्रक्रिया में प्रत्येक अनुत्तरदायी और भावशून्य

[25] (2014) 8 एस. सी. सी. 470.

[26] **सुब्रतो राय सहारा** बनाम **भारत संघ** (2014) 8 एस.सी.सी. 470, पैरा 149-153.

दावे के दूसरी ओर एक निर्दो-न व्यक्ति क-ट सहन कर रहा है । मुकदमे के लंबित रहने के दौरान उसकी किसी गलती के बिना वह निरंतर अधीरता से काफी लंबी अवधि तक क-ट सहन करता है ।

..... न्यायनिर्णायक प्रक्रिया की वर्तमान व्यवस्था में ऐसा वादकारी जो चाहे कितना अनुत्तरदायी हो उसे कोई परिणाम नहीं भुगतना पड़ता । अतः प्रत्येक वादकारी एक अवसर लेना चाहता है चाहे काउंसेल की सलाह विपरीत ही क्यों न हो ।

..... और कुछ ऐसे वादकारी हैं जो निरर्थक और कुविचारित दावों की पैरवी करते ही रहते हैं और किसी तरह से या अन्यथा विधि की प्रक्रिया को विफल करते हैं । जब वादकारी पक्षकार को ज्ञान हो कि उसे ऐसे पक्षकार की प्रतिपूर्ति करनी होगी जो सफल होगा तो अनावश्यक मुकदमेबाजी में सारतः कमी आएगी । अंततः, न्यायालय का बेकार गया समय रा-ट्र की प्रत्यक्ष हानि है ।"

2.14 न्यायालय की मताभिव्यक्तियां निर्देशात्मक हैं क्योंकि वे सिविल न्याय प्रणाली में मुकदमे के संचालन के भीतर गहरी दुर्भावना प्रकट करती है जहां पक्षकार मुकदमे की गति और तीव्रता तथा स्थगनों की बारंबारता पर नियंत्रण रखते हैं । यह इस बात को मान्यता प्रदान करने से उद्भूत होता है कि न्यायनिर्णयन एक लोक सेवा है जो अधिकारों को प्रवृत्त करने के लिए अनुमित है और समय और लागत के अवरोधों के भीतर सही विनिश्चय पर पहुंचता है (जैसा यू.के. में किया गया है) । जैसे कोई व्यक्ति लागत के बावजूद सर्वोत्तम संभव सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा का हकदार नहीं है उसी प्रकार कोई व्यक्ति समय और लागत के बावजूद सर्वोत्तम संभव न्यायनिर्णायक परिणाम का हकदार नहीं है ।[27] जब वादकारी मामलों में विलंब कारित करते हैं तो वे न्यायालय का समय और धन लेते है इस प्रकार, पब्लिक ; विपक्षी पक्षकार ; और अन्य वादकारी को न्यायालय के समक्ष कम समय मिलता है । परिणामतः, भारत में मुकदमा प्रक्रिया मुकदमेबाज-प्रबंधित से न्यायालय-प्रबंधित में परिवर्तित कर मुकदमे की संस्कृति में

[27] एड्रियन जकरमैन, जकरमैन आन सिविल प्रोसीजर, प्रिंसिपिल एंड प्रैक्टिस(तीसरा संस्करण) 2013, देखें ।

परिवर्तन करने की अपेक्षा है ।

2.15 मुकदमे की संस्कृति में परिवर्तन की आमूल-चूल और व्यापक परिवर्तन की भी अपेक्षा है किंतु प्रक्रियागत नियमों में लक्ष्यित और विनिर्दि-ट उपांतरणों के माध्यम से कतिपय सुधार किए जा सकते हैं । व-र् 1976 और 2002 में सी. पी. सी. में संशोधनों के बावजूद, सिविल मुकदमे के संचालित करने की रीति में परिवर्तन मामूली और व्यापकतः सौन्दर्यात्मक ही रहा है । गंभीर सुधार सिविल मुकदमों को शासित करने वाले नियमों में आमूल-चूल परिवर्तन की अपेक्षा करता है और इस रिपोर्ट में जो कुछ सुझाया गया है वह वाणिज्यिक विवादों के समाधान के लिए सारतः प्रक्रियाओं में परिवर्तन कर - सिविल मुकदमेबाजी का नया दृ-टिकोण है ।

2.16 ऐसे सारवान परिवर्तन का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि वाणिज्यिक विवादों को संचालित करने वाले नियम साधारण और प्रभावी तथा वर्तमान अप्रभावी और दुर्भर प्रक्रियाओं को प्रतिस्थापित करने वाले हैं । ऐसे परिवर्तन कतिपय न्यायालयों को मात्र ''वाणिज्यिक न्यायालय'' के रूप में अभिहित करने और वाणिज्यिक न्यायालय के मात्र स्थापन पर सुधार प्रक्रिया रोक देने से नहीं लाए जा सकते । नीचे विमर्शित यू. के. जैसे अन्य अधिकारिताओं का उदाहरण यह दर्शित करता है कि यह सुनिश्चित करने के लिए व्यापक प्रक्रियात्मक परिवर्तनों की अपेक्षा है कि वाणिज्यिक मुकदमों का शीघ्र, दक्षपूर्ण और आनुपातिक रीति से संचालन किया जाए ।

2.17 यदि कोई इंग्लैंड या सिंगापुर के वाणिज्यिक न्यायालयों में ऐसी रीति की परीक्षा करता है जिसके अनुसार मुकदमे संचालित किए जाते हैं तो उसे पता चलता है कि भारत में और इन देशों के वाणिज्यिक मुकदमों के बीच मुख्य अंतर न केवल वहां वाणिज्यिक न्यायालयों की स्थापना मात्र है बल्कि प्रक्रिया और रीति में भी है जिसके अनुसार वाणिज्यिक वादों का संचालन किया जाता है । अभिवचनों को प्रस्तुत करने की सीमा से लेकर सारी बातें, ऐसी रीति जिसके अनुसार दस्तावेजों को पेश किया जाना है और कड़ाई से प्रवृत्त समयबद्धता के अननुपालन के परिणामों का पक्षकारों और काउंसेलों द्वारा पालन किया जाता है । इस प्रकार, भारतीय संदर्भ में, वाणिज्यिक

मुकदमों से तंग होने की समस्याओं के प्रतिरोध के लिए विधायी संशोधनों के अलावा मुकदमों के संचालन और दस्तावेजों के नियंत्रण में काफी अधिक नियामक और व्यावहारिक परिवर्तनों की अपेक्षा है ।

2.18 अन्य अधिकारिताओं के वाणिज्यिक न्यायालयों के अस्तित्व का उल्लेख करते समय, कुल मिलाकर विधेयक के प्रक्रियात्मक उपबंध सी. पी. सी. के प्रतिमान पर आधारित है । संपूर्ण विश्व में, न्यायालय विशे-ाकर वाणिज्यिक न्यायालय यह सुनिश्चित करने के लिए कि विचारणों में ठीक-ठीक और दक्षतापूर्ण ढंग से प्रगति हो, तकनीकी विकास और वास्तविक जीवन अनुभव के आधार पर प्रक्रियागत नवीकरण का कार्य कर रहे हैं । इस प्रकार, ऐसे परिवर्तनों की प्रकृति को समझने के लिए जो सुधार कार्य करने के लिए आवश्यक है, यू. के. और सिंगापुर की सिविल प्रक्रिया विधियों की संक्षेप में परीक्षा करना श्रेयस्कर होगा ।

(i) यूनाइटेड किंगडम

2.19.1 यू. के. में, सिविल प्रक्रिया अधिनियम, 1997 और सिविल प्रक्रिया नियम जो 1999 में प्रवृत्त हुआ, सिविल प्रक्रिया और मुकदमे के संचालन को शासित करते हैं । ये विधियां मामलों के ठीक तरह से और आनुपातिक लागत पर निपटाने के लिए तत्कालीन मास्टर आफ रोल्स, लार्ड वूल्फ द्वारा तैयार की गई न्याय की पहुंच रिपोर्ट, 1996 (इसमें इसके पश्चात् ''वूल्फ रिपोर्ट'') के नाम से ज्ञात प्रारंभिक रिपोर्ट के उत्पाद हैं ।[28] सिविल प्रक्रिया नियम (इसमें इसके पश्चात् ''सी.पी.आर.'') का भाग 58 और प्रैक्टिस निदेश के विस्तृत सेट विनिर्दि-टतः वाणिज्यिक न्यायालयों को लागू होते हैं जबकि सी. पी. आर. का भाग 62 माध्यस्थम् आवेदनों को लागू होता है ।

2.19.2. लाड वूल्फ द्वारा यथा चिह्नित यू. के. में विद्यमान सिविल न्याय प्रणाली की समस्याओं को इस प्रकार सुस्प-ट किया गया :

---

[28] नेल रोज सिविल प्रोसीजर नियम, 10 व-र्ों का परिवर्तन, दि ला सोसाइटी गजट, 28 मई, 2009 <http://www.lawgazette.co.uk/50942.article> पर उपलब्ध ।

"यह इतना खर्चीला है कि प्रायः लागत दावे के मूल्य से अधिक हो जाता है ; मामलों को निपटाने की गति बहुत धीमी होती है और सशक्त, धनवान, वादकारी और साधनहीन वादकारी के बीच समानता की कमी है अर्थात् काफी असमानता है। यह काफी अनिश्चित है ; पूर्वानुमान लगाना कठिन है कि मुकदमे में कितनी लागत आएगी और यह कब तक चलेगा जो अज्ञानता का भय पैदा करता है और यह कई वादकारियों के लिए अबोधगम्य है । कुल मिलाकर, संगठनात्मक रीति में यह इतना विघटित है क्योंकि सिविल न्याय के प्रशासन का कोई स्प-टतः समग्रतः उत्तरदायी नही है : और इतना प्रतिकूलात्मक है जैसे कि मामले पक्षकारों द्वारा चलाए जा रहे हैं न कि न्यायालयों द्वारा और न्यायालय के नियमों की प्रायः पक्षकारों द्वारा उपेक्षा की जाती है और न्यायालय द्वारा इसे प्रवृत्त नहीं किया जाता ।"[29]

2.19.3 लार्ड वूल्फ द्वारा यथा चिह्नित समस्याएं आजकल भारत की सिविल प्रणाली द्वारा झेली जाने वाली समस्याओं के एकदम समरुप हैं अतः, यह परीक्षा करना श्रेयस्कर होगा कि क्या समाधान प्रस्तावित थे और कैसे इन्हें यू. के. में लागू किया गया।

2.19.4 वूल्फ रिपोर्ट ने ऐसे सिद्धांतों की पहचान की जो सिविल न्याय प्रणाली न्याय की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए पूरा करे । वूल्फ रिपोर्ट के अनुसार, प्रणाली इस प्रकार होनी चाहिए -

(क) उसके द्वारा दिए गए परिणाम **न्यायसम्मत** होने चाहिए ;

(ख) वादकारियों के साथ **नि-पक्ष रीति** से व्यवहार किया जाना चाहिए ;

(ग) युक्तियुकत **लागत** पर समुचित प्रक्रियाएं प्रदान करनी चाहिए ;

(घ) युक्तियुक्त **गति** से मामलों का निपटान किया जाना चाहिए ;

(ङ) उनकी **समझ** में आना चाहिए जो इसका उपयोग करते हों ;

---

[29] लार्ड वूल्क, न्याय की पहुंच रिपोर्ट का विहंगम (1996), पैरा 2-3 <http://webrchive.nationalarchives.gov.uk/+/http://www.dca.gov.uk/civil/final/overvies.Htm> पर उपलब्ध ।

(च) उनकी आवश्यकताओं के प्रति **जवाबदेह** होना चाहिए जो इसका उपयोग करते हों ;

(छ) इतनी **निश्चितता** की व्यवस्था करनी चाहिए जैसा विशि-ट मामलों की प्रकृति अनुज्ञात करे ; और

(ज) **प्रभावी** होना चाहिए ; पर्याप्ततः संसाधित और संगठित होनी चाहिए ।

(मूलतः मोटे अक्षर का पालन किया जाए)[30]

2.19.5 लार्ड वूल्फ और उनकी समिति द्वारा सुझाए गए सुधारों के परिणामस्वरूप क्रियान्वित, नियमों के रहस्योद्घाटनों में से एक नियम (सी.पी.आर. 1.1) के भाग 1 में समावि-ट "अभिभावी उद्देश्य" है जो यह उल्लेख करता है :

"(1) ये नियम मामलों को नि-पक्ष रूप से निपटाने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने के अभिभावी उद्देश्य के साथ नई प्रक्रियागत संहिता है ।

(2) मामले को नि-पक्ष रूप से निपटान में जहां तक व्यवहार्य है निम्नलिखित सम्मिलित हैं -

(क) यह सुनिश्चित करना कि पक्षकारों का स्तर एक समान हो ;

(ख) व्यय बचाना ;

(ग) ऐसी रीति से मामले से निपटना जो निम्नानुसार समानुपातिक हो -

(i) अंतर्वलित धन की रकम के संबंध में ;

(ii) मामले के महत्व के संबंध में ;

(iii) विवाद्यकों की जटिलता के संबंध में ; और

(iv) प्रत्येक पक्षकार की वित्तीय स्थिति के संबंध में ;

(घ) यह सुनिश्चित करना कि इसे शीघ्रातिशीघ्र और नि-पक्षता से निपटाया जाए ; और

---

[30] वूल्फ रिपोर्ट, पूर्वोक्त टिप्पण 29, पैरा 1

(ङ) अन्य मामलों के लिए संसाधन आबंटित करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए न्यायालय के संसाधनों का समुचित अंश इसे आबंटित करना ।"

2.19.6 न्यायालय को किस रीति से अभिभावी उद्देश्य को प्रभावी बनाना चाहिए, भी नियमों में सूचीबद्ध है ।

"1.2. न्यायालय को अभिभावी उद्देश्य को प्रभावी बनाने की मांग करनी चाहिए जब यह -

(क) नियमों द्वारा उसे दी गई किसी शक्ति का प्रयोग करता है ; या

(ख) किसी नियम का निर्वचन करता है ।

नियम न केवल अधिवक्ताओं के लिए बल्कि व्यक्तिगत रूप से बहस करने वाले वादकारियों के लिए भी बोधगम्यता हेतु लिखित रूप में होने चाहिए ।"[31]

2.19.7 न्यायाधीशों को ठीक तरह से और समयबद्ध रीति से मामलों का प्रबंध करने के लिए सशक्त करने हेतु सी.पी.आर. में अधिक बल दिया गया है । यह सुनिश्चित करने के लिए न्यायालय में मुकदमे पर नियंत्रण रखने की शक्ति निहित करने की आवश्यकता है कि लागत की उत्तरोत्तर वृद्धि को निवारित करने के लिए न्यायालयों के समक्ष केवल सुसंगत विवाद्यक ही उठाए जाएं । इसके अतिरिक्त, नियम पक्षकारों को यथासंभव न्यायालय के बाहर विवादों का समाधान करने को भी प्रोत्साहित करते हों ।

2.19.8 निस्संदेह ये सुधार बहुत सफल रहे हैं जैसाकि एक मास में 10,000 से घटकर लगभग 2000 तक होने के कारण क्वींस बेंच प्रभाग के समक्ष प्रतिमास फाइल किए गए मामलों की संख्या में तत्काल गिरावट देखा गया है और विचारण के समक्ष सुलझाए गए मामलों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है ।[32]

---

[31] वूल्फ रिपोर्ट, पूर्वोक्त टिप्पण 29, अध्याय 1, पैरा 3 ।

[32] अलास्टेयर व्याविल, दि सिविल प्रोसीजर रिफार्म 10 व-र्ा तक : सफलता या असफलता
<http://www.google.co.in/url?sa=t&rct=j&q=&esrc=s&source=web&cd=1&cad=rja&uact=8&ved=0CBsQFJAA&url=http%3A%2F%2Fwilliamforster.com%2Fwp.Content%2Fuploads%2F2010%2F04%2Fwyvill-the-wolf-civil-procedure-reforms-10year-on.doc&ei=PQS1U6GuA4.8uASChot.wAw&usg=AFOjCNGh70fzmqaUka0IAPhKXLQxaBnmaQ&sig2=YjhjSXnScwiACQQY7mrFKA&bvm=bv.70138588,d.c2E>last accessed 18 December, 2014.

(ii) सिंगापुर

2.20.1 सिंगापुर में, सिंगापुर के उच्चतम न्यायालय के एक प्रभाग 250000 एस.जी.डी. से अधिक धनीय अधिकारिता वाला सर्वप्रथम उच्च न्यायालय है । उच्च न्यायालय की प्रक्रिया मुख्य न्यायमूर्ति, अटर्नी जनरल और अन्य न्यायाधीशों तथा अधिवक्ताओं से मिलकर बनी उच्च न्यायालय की नियम समिति द्वारा प्रख्यापित न्यायालय के नियमों द्वारा शासित होती है । नियमों के मुख्य लक्षण इस प्रकार हैं :

(क) न्यायालय फीस मामले के पक्षकारों द्वारा सुनवाई के लिए उपभोग की गई दिनों की संख्या के आधार पर बढ़ती है । उदाहरणार्थ, पहली तीन सुनवाई के लिए कोई न्यायालय फीस संदेय नहीं है, पहली पांच सुनवाई के लिए 8000 एस.जी. डी. संदेय है, पहली दस सुनवाई के लिए 2000 एस.जी.डी. और इसी प्रकार संदेय है । दस सुनवाई तक मानदंड बढ़ता रहता है और ग्यारहवीं सुनवाई से आगे प्रति सुनवाई 5000 प्रति एस.जी.डी. तक न्यायालय फीस जाता है ।

(ख) सुनवाई के किसी प्रक्रम पर न्यायालय द्वारा अभिवचनों को अभिखंडित किया जा सकता है यदि ऐसा अभिवचन कोई वाद हेतुक प्रकट नहीं करता, उलझाऊ है और नि-पक्ष विचारण में विलंब कारित करता है या न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के समान है ।[33]

(ग) न्यायालय, यथास्थिति, समझौते की संभावना का पता लगाने या विचारण का उचित विचारण सुनिश्चित करने के लिए पक्षकारों के बीच "विचारण पूर्व सम्मेलन" का निदेश दे सकता है । ऐसे विचारण-पूर्व सम्मेलनों में विचारण का उचित विचारण सुनिश्चित करने के लिए न्यायालय द्वारा दिए गए निदेश पक्षकारों पर आबद्धकर हैं और किसी व्यतिक्रम की दशा में न्यायालय बचाव को निकाल सकता है या ऐसे बिंदु पर निर्णय दे सकता है जिस पर वह ठीक समझे ।[34]

CNGh70fzmqaUka0IAPhKXLQxaBnmaQ&sig2=YjhjSXnScwiACQQY7mrFKA&bvm=bv.70138588,d.c2E>last accessed 18 December, 2014.

ivil-procedure-reforms-10year-on.doc&ei=PQS1U6GuA4.
8uASChot.wAw&usg=AFOjCNGh70fzmqaUka0IAPhKXLQxaBnmaQ&sig2=YjhjSXnScwiACQQY7mrFKA&bvm=bv.70138588,d.c2E>last accessed 18 December, 2014.

33. न्यायालय नियम का आदेश 19, नियम 19.

34. न्यायालय नियम का आदेश 43क.

(घ) प्रत्येक सुनवाई के अंत में सुनवाई का शासकीय अभिलेख बनाया जाए और पक्षकार उसके शासकीय प्रतिलिपि के लिए आवेदन कर सकते हैं और अभिप्राप्त कर सकते हैं ।[35]

2.20.2 यह सुनिश्चित करने में यू. के. और सिंगापुर के न्यायालयों द्वारा दिए गए महत्व को दर्शाने के लिए ही ये लक्षण उजागर किए जा रहे हैं कि विचारण का संचालन शीघ्रता और नि-पक्षता और वादकारियों की युक्तियुक्त लागत पर किया जाए । जहां लार्ड वूल्फ द्वारा विकसित मार्गदर्शक सिद्धांत यह समझने के लिए विचार किए जाने योग्य है कि भारत में सिविल प्रक्रिया को कैसे पुर्ननिर्मित किया जाए वहीं सिंगापुर विधि के उपबंध यह अंगीकार करने के लिए रुचिकर मोडल उपलब्ध कराते हैं जिससे कि इन सिद्धांतों को प्रभावी बनाया जा सके ।

2.20.3 यदि भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की प्रभाविता और प्रभावोत्पादकता को सुधारना ही लक्ष्य है तो ऐसा कोई श्रेयस्कर पाठ सीखने के लिए, जो भारतीय परिदृश्य में लागू कियाजा सके, अन्य देशों में अपनाई गई प्रक्रियात्मक विधियों की गंभीरता से परीक्षा करना बुद्धिमानी होगी ।

(घ) वाणिज्यिक प्रभाग में विशे-नज्ञता पर बल नहीं

2.21 विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट यह मान्यता प्रदान करती है कि पूरे विश्व में, विशे-न रूप से यूनाइटेड स्टेट, यू. के. और सिंगापुर को उदाहरण देते हुए, वाणिज्यिक न्यायालय विशे-नज्ञ न्यायाधीशों द्वारा चलाए जाते हैं । विवादों की अति तकनीकी प्रकृति के कारण वाणिज्यिक न्यायालय में ऐसे बहस किए जाने की संभावना है जिसे विशे-नज्ञ न्यायाधीश ही मामलों को प्रभावपूर्ण ढंग से निपटाने में बेहतर सुसज्जित होंगे । तथापि, 2009 विधेयक ऐसे न्यायाधीशों की किसी विशे-नज्ञता का कोई उपबंध नहीं करता जिन्हें मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा वाणिज्यिक प्रभाग के न्यायाधीशों के रूप में नामनिर्दि-ट किए जाने हैं । फिर भी, ऐसा कोई

4. 8uASChot.wAw&usg=AFOjCNGh70fzmqaUka0IAPhKXLQxaBnmaQ&sig2=YjhjSXnScwiACQQY7mrFKA&bvm=bv.70138588,d.c2E>last accessed 18 December, 2014.

उपबंध नहीं है जो यह अपेक्षा करता हो कि वाणिज्यिक प्रभागों के न्यायाधीश के रूप में उनकी अवधि के दौरान न्यायाधीशों के कौशल को संवर्धित किया जाए ।

---

35. न्यायालय नियम का आदेश 38क.

2.22 यद्यपि यह अभिस्वीकार किया गया है कि उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवादों में जटिल तथ्य और विधि प्रश्न अंतवर्लित होते हैं फिर भी, यह सुनिश्चित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया है कि उस विशि-ट क्षेत्र की अपेक्षित जानकारी और योग्यता रखने वाले न्यायाधीश ही ऐसे वाणिज्यिक विवादों को विनिश्चत करें । न्यायाधीशों को प्रशिक्षित करने और उनकी जानकारी नवीनतम रखने के लिए उनकी सहायता हेतु सतत न्यायिक शिक्षा देने की अवसंरचना पहले ही भोपाल की रा-ट्रीय न्यायिक अकादमी और संपूर्ण देश में गठित विभिन्न राज्य न्यायिक अकादमियों के माध्यम से उपलब्ध है । तथापि, विधेयक यह सुनिश्चित करने का कोई प्रयास नहीं करता कि ऐसे अवसंरचना का यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त उपयोग किया जाए कि न्यायाधीश जटिल वाणिज्यिक विवादों को निपटाने में सही रूप से सुसज्जित हों ।

2.23 न्यायिक विशे-ाज्ञता के अलावा पूरे विश्व में विधि और वाणिज्य के विकास की शीघ्र गति के कारण यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि न्यायाधीश नवीनतम समसामयिक वैश्विक विकास से अवगत हों । इसके लिए नियुक्तियों के प्रक्रम पर और इसके पश्चात् लगातार प्रशिक्षण देना आवश्यक है । वाणिज्यिक न्यायालय न्यायाधीशों को भी प्रभावपूर्ण ढंग से मामलों के निपटान में सहायता के लिए तकनीक के उपयोग से अवगत रखा जाना चाहिए ।

अध्याय 3

उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग विधेयक, 2009 को आधुनिक बनाने और पुनर्विरचित करने की आवश्यकता

क. भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की स्थापना

3.1 पक्षकारों के बीच जटिल वाणिज्यिक विवादों को निपटाने के उद्देश्य से समर्पित फोरम अर्थात् वाणिज्यिक न्यायालय की अवधारणा एक ऐसा विचार है जिसकी अपने निजी क्षेत्र में गुणता है । इसे इस तथ्य से देखा जा सकता है कि संपूर्ण विश्व में कई रा-ट्रों ने वाणिज्यिक मामलों में शीघ्र न्याय परिदान सुनिश्चित करने के माध्यम के रूप में वाणिज्यिक न्यायालयों को अंगीकृत किया है । ऐसे कई देश जिन्होंने वाणिज्यिक न्यायालयों की स्थापना की है, से संबंधित और विस्तृत चर्चा आयोग की 188वीं रिपोर्ट में देखी जा सकती है और संक्षिप्तता की दृ-टि से इसे यहां नहीं दोहराया जा रहा है । तथापि, भारत में वाणिज्यिक न्यायालय के औचित्य का संक्षेप में पुनर्कथन करना श्रेयस्कर होगा ।

(i) आर्थिक विकास वृद्धि

3.2.1 वाणिज्य और व्यापार की वृद्धि और विकास के लिए स्थायी, दक्षपूर्ण और कतिपय विवाद समाधान तंत्र का महत्व सुस्थापित है । संविदाओं का शीघ्र प्रवर्तन, उठाई गई नुकसानियों के लिए उचित प्रतिकर और धनीय दावों की आसान प्राप्ति विनिधान और आर्थिक क्रियाकलाप को प्रोत्साहित करने के लिए बिल्कुल कठिन है जिसमें निश्चित रूप से वित्तीय और प्रवर्तन जोखिम अंतवर्लित है । अतः, स्थायी, निश्चित और दक्षपूर्ण विवाद समाधान तंत्र, किसी रा-ट्र के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है ।

3.2.2 जहां न्यायपालिका जैसी विधिक संस्थाएं प्रभावी नहीं है वहां सैद्धांतिक विधि में सुधार से बिल्कुल नगण्य अंतर पड़ता है । पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी यूरोप और पूर्व सोवियत संघ के संक्रमणकालीन देशों का अध्ययन करने से यह पता चला कि 1992

से 1998 के बीच अवधि के दौरान कारपोरेट और दिवालिया विधियों में सारवान परिवर्तनों के बावजूद केवल उन देशों में वित्तीय बाजार में उल्लेखनीय सुधार हुआ जहां विधिक संस्थाएं अधिक प्रभावी हो गई थीं ।[36]

3.2.3 अंततः, मंद या अति-बोझिल न्यायिक प्रणालियां संसाधन (समय और धन) का गैर-प्रभावपूर्ण उपयोग कर विकास में बाधा पहुंचाती हैं ; प्रवर्तन लागत या विलंब जैसे संव्यवहार लागत बढ़ाते है ; और देशों को उनके सर्वोत्तम संभव उत्पाद से दिगभ्रमित करती हैं । जब संविदा और साम्पत्तिक अधिकारों का ठीक से प्रवर्तन नहीं किया जाता है तो फर्म कतिपय क्रियाकलापों की पैरवी का विनिश्चय कर सकते हैं ; विशे-ाज्ञता के अवसर को जाने देते हैं और पैमाने पर अर्थव्यवस्था का शे-ाण करते हैं और सर्वाधिक निपुणता से मुवक्किलों और बाजारों में अपने उत्पाद का आवंटन नहीं करते और इस प्रकार संसाधनों को अप्रयुक्त छोड़ देते हैं ।

(ii) भारतीय न्याय परिदान प्रणाली की अंतरा-ट्रीय छवि में सुधार

जैसाकि विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट में भी कुछ विस्तार से चर्चा की गई है फिर भी विदेशी निवेशकों और कंपनियों की यह धारणा है कि भारत अन्य बातों के साथ-साथ न्यायिक प्रणाली की मंदगति और अप्रभाविता के कारण कारबार करने का खराब स्थान है । यह विश्व बैंक की वार्-िक ''डूइंग विजीनेस'' रिपोर्ट से भी प्रतिबिम्बित होता है जो कारबार विनियमों का मूल्यांकन करता है । यह रिपोर्ट अन्य बातों के साथ-साथ उस रा-ट्र में संविदाओं के प्रवर्तन की सरलता या कठिनाई पर भी विचार करती है।[37] 2014 रिपोर्ट में 189 रा-ट्रों के सर्वेक्षण में भारत 2013 की अपनी स्थिति में बिना परिवर्तन किए ''संविदा प्रवर्तन'' के प्रवर्ग में 186वें रैंक पर था ।[38] बैंक द्वारा एकत्र किए

---

[36] कैथरीन पिस्टर, मार्टिन रेजर और स्टेनला गेल्फर, संक्रमण अर्थव्यवस्था में विधि और वित्त 8(2) इकोनामिक्स आफ ट्रांजीसन 325 (2000).

[37] विश्व बैंक, डूइंग विजीनेस, 2014 ; इकोनामी प्रोफाइल : भारत, <http://www.doingbusiness.org/data/exploreeconomies/-/media/giawb/doing%20business/documents/profiles/country/IND.pdf?ver=2> पर उपलब्ध ।

[38] विश्व बैंक, डूइंग विजीनेस, 2013 : लघु और मध्यम आकार उद्यमों के लिए द्रुतगामी विनियमन <http://www.Doingbusiness.org/~/media/GIAWB/Doing%20Business/Documents/Annual-Reports/English/DB13-full-report.pdf> पर उपलब्ध ।

गए आंकड़ों के अनुसार संविदा प्रवर्तन में 1420 दिन (अर्थात् लगभग चार व-र्ी) लगता है और प्रवर्तन की लागत, दावे के मूल्य का लगभग 40% होता है । चूंकि विश्व बैंक ने सर्वप्रथम 2004 में रिपोर्टों के क्रम आरंभ किए तब से संविदा के प्रवर्तन में लगने वाले दिनों की संख्या के निबंधन में या अंतवर्लित लागत के निबंधन में इन संख्याओं में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । रिपोर्ट से यह भी पता चला कि संविदा प्रवर्तन में पिछले छह व-र्ों से भारत में कोई सुधार नहीं हुआ है ।[39]

(iii) विधिक संस्कृति में सुधार

3.4.1 अतः, इस रिपोर्ट में यथाप्रस्तावित पुनः प्रारुपित विधेयक का दृ-टिकोण उच्च न्यायालयों के भीतर वाणिज्यिक न्यायालय और वाणिज्यिक प्रभाग की स्थापना करना है जो वाणिज्यिक मुकदमेबाजी में नए प्रैक्टिस और प्रैक्टिस के मानक स्थापित करते हुए आदर्श न्यायालय के रूप में कार्य करेंगे जिसे समयानुसार भारत के सभी सिविल मुकदमों तक बढ़ाया या विस्तारित किया जा सकता है । सुझाए गए परिवर्तनों का आशय केवल उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवाद तक सीमित है बल्कि वाणिज्यिक न्यायालयों के कार्यकरण का मूल्यांकन करने के पश्चात् समयानुसार सभी विवादों तक विस्तारित किया जाना चाहिए । अपने उद्देश्यों को पूरा करने के अलावा वाणिज्यिक न्यायालय द्वारा संपूर्ण देश की सिविल मुकदमेबाजी को सुधार करने की भी एक प्रमुख परियोजना है जो विलंब तथा विचाराधीनता के दोनों मुद्दों को निपटाता है । आदर्शतः, वाणिज्यिक न्यायालयों को भारत के सभी सिविल न्यायालयों के कार्यकरण के लिए आदर्श होना चाहिए और यहां अपनाई जाने वाली प्रक्रिया सी.पी.सी. के व्यापक सुधार के लिए आधार हो सकती है । इस प्रकार, यह चिंता कि वाणिज्यिक न्यायालय केवल "अभिजात वर्ग" के लिए ही है, को दीर्घ अवधि में दूर किया जाएगा ।

3.4.2 भारत को संदेह से परे उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवादों के प्रभावी और सार्थक समाधान के लिए वाणिज्यिक न्यायालयों की आवश्यकता है । 2009 विधेयक की आलोचना का लक्ष्य वाणिज्यिक न्यायालयों की संरचना और कार्यकरण पर है । फिर

[39] विश्वबैंक, पूर्वोक्त टिप्पण 37, पृ-ठ 90-93.

भी, इंगित की गई खामियों को नीचे की गई सिफारिश के अनुसार प्रक्रियात्मक विधियों में संशोधन और अन्य उपायों के साथ पराभूत किया जा सकता है । इस रिपोर्ट की सिफारिशों के अनुसार संरचित वाणिज्यिक न्यायालयों का आशय वाणिज्यिक विवादों के शीघ्र और गुणताप्रद समाधान सुनिश्चित करने और भारत में सिविल न्याय प्रणाली का सुधार करने का ढांचा उपलब्ध कराकर दोनों उद्देश्यों का पूरा करना है ।

ख. पिछले पांच व-र्गों में महत्वपूर्ण विकास

3.5 विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट व-र् 2004 में जारी की गई थी और विधेयक व-र् 2009 में पुरःस्थापित किया गया था । तब से, कई परिवर्तन हुए जिसे अधिक प्रभावी और सार्थक बनाने के लिए विधेयक में सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है । कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तनों की चर्चा नीचे की गई है :

(i) आदर्श न्यायालय

3.6.1 विद्यमान न्यायिक प्रणाली की कुछ समस्याओं से निपटने के लिए, रा-ट्रीय न्याय परिदान और विधिक सुधार मिशन ने निम्नलिखित सदस्यों के साथ विधि आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी की अध्यक्षता में आदर्श न्यायालयों पर एक उप-समूह गठित किया : न्यायमूर्ति ए. पी. शहा (दिल्ली उच्च न्यायालय, सेवानिवृत्त मुख्य न्यायमूर्ति), प्रो. एन. आर. माधव मेनन, डा. सैम पित्रोदा और श्री अतुल कौशिक (संयुक्त सचिव, न्याय विभाग) । आदर्श न्यायालयों पर उप समूह की रिपोर्ट (इसमें इसके पश्चात् "आदर्श न्यायालय रिपोर्ट") पूर्वोक्त उपसमूह के विचार-विमर्श का परिणाम है ।

3.6.2 आदर्श न्यायालय रिपोर्ट ने ऐसे आदर्श न्यायालय की अवधारणा विकसित की जिनकी मुख्य अपेक्षाएं कार्य-कुशलता और न्याय है । आदर्श न्यायालय को शासित करने वाले पांच जातीय सिद्धांत इस प्रकार हैं : (i) जानकारी की पहुंच नागरिक अनुकूल होनी चाहिए ; (ii) वादकारियों के लिए यह समय के निबंधनों दक्ष होना चाहिए ; (iii)यह उचित और नि-पक्ष होना चाहिए ; (iv) वादकारियों को युक्तियुक्ततः यह

निश्चित होना चाहिए कि उनके मामले विचारण के लिए कब आएंगे ; और (v) इसका अंत कब होगा । इसको प्राप्त करने के लिए तीन क्षेत्रों में सिफारिशें की गई हैं, अर्थात् प्रक्रिया संबंधी सुधार ; भौतिक और तकनीकी अवसंरचनात्मक सुधार ; और वृत्तिक तथा उत्तरदायी कार्मिकों का प्रशिक्षण ।

3.6.3 आदर्श न्यायालय रिपोर्ट में अधिकथित विस्तृत सिफारिशों को संक्षिप्तता की दृ-टि से यहां नहीं दोहराया जा रहा है किंतु, भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों के गठन में अपनाए जाने वाले मार्गदर्शक सिद्धांतों का उपयोगी सेट गठित करता है विशे-ाकर क्योंकि वाणिज्यिक न्यायालय वर्तमान न्याय परिदान प्रणाली में दक्षपूर्ण और न्याय को संवर्धित करने के प्रयास भी हैं । वाणिज्यिक न्यायालय वादकारियों को शीघ्र न्याय प्रदान करने के अपने उद्देश्य को पूरा करने हेतु बेहतर सिद्धांतों और सिफारिशों के आधार पर संरचित किया जाए और "आदर्श न्यायालय" की तरह चलाया जाए ।

(ii) उच्च न्यायालयों की न्यायिक संख्या में वादागत वृद्धि

जहां विधि आयोग की 188वीं रिपोर्ट में यह सुझाया गया था कि वाणिज्यिक न्यायालयों के गठन के साथ-साथ उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या में वृद्धि की जाए वहीं सरकार द्वारा समय पर कोई ऐसा उपबंध या कार्य नहीं किया गया । तथापि, केंद्रीय सरकार द्वारा 25% तक उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया है । उच्च न्यायालयों की न्यायाधीश संख्या में वृद्धि को समायोजित करने के लिए नए अवसंरचना के सृजन की भी अपेक्षा है । अतः, वाणिज्यिक न्यायालयों के प्रस्ताव पर विचार किया जाए ।

(iii) कंप्यूटरीकरण

3.8.1 चूंकि 188वीं रिपोर्ट के प्रकाशन और 2009 विधेयक के पुरःस्थापन से ई-न्यायालय को लागू किया गया और देश के कई स्थानों पर कार्य करना आरंभ कर दिया है । इस समय, अन्य न्यायालयों के साथ-साथ दिल्ली उच्च न्यायालय और भारत के उच्चतम न्यायालय ने मामलों के ई-फाइलिंग को अनुज्ञात कर दिया है और कुछ

न्यायालय कक्षों को ई-न्यायालय अभिहित किया गया है जहां न्यायाधीशों द्वारा फाइल और टिप्पण का कार्य इस प्रयोजन के लिए विशे-न रूप से प्रयुक्त ई-रीडर पर किया जा रहा है । ई-न्यायालय यह सुनिश्चित करने में उपयोगी हैं कि कागज न खो जाएं और अभिलेखों का उचित रूप से अनुरक्षण हो । विशे-कर वे तब उपयोगी हैं जब अभिलेखों की मात्रा अधिक है और आसान पहुंच और न्यायाधीशों के निदेश प्राप्त करने के लिए समय बचाने में सहायता करता है । बम्बई विस्फोट मामले में, जहां अभिलेख काफी विशाल हैं, भारत के उच्चतम न्यायालय ने सभी अभिलेखों को कम्पयूटरीकृत किया और मामलों की सुनवाई ऐसे संचालित की गई मानो वे ई-न्यायालय में हों ।

3.8.2 एक बार गठित हो जाने पर वाणिज्यिक न्यायालयों के कम्प्यूटरीकरण और अंकीयकरण के अनुभव पर विचार करना चाहिए । सभी वाणिज्यिक न्यायालयों को विशालकाय अभिलेखों के अनुरक्षण और कार्यकरण की प्रभाविता में सुधार करने में सहायता हेतु ई-न्यायालय बनाए जाने चाहिए ।

ग. वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय के सृजन के लिए नए सिरे से प्रस्ताव

3.9 विधेयक को उपांतरित करने का प्रस्ताव है जिससे कि निम्न हेतु शक्ति केंद्रीय सरकार में निहित की जा सके : (i) चेन्नई की तरह, मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता रखने वाले उच्च न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभागों की स्थापना ; (ii) उन क्षेत्रों में वाणिज्यिक न्यायालय जिसके लिए मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता वाले ऐसे उच्च न्यायालयों की आरंभिक सिविल अधिकारिता का विस्तार मदुरै की तरह न हो ; और ऐसे राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों में वाणिज्यिक न्यायालय जहां उच्च न्यायालयों के पास नीचे वर्णित रीति में आरंभिक सिविल अधिकारिता न हो ।

3.10 ऐसे परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए जो नीचे प्रस्तावित किए जा रहे हैं, विधेयक को "उच्च न्यायालयों का वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "2015 विधेयक" कहा गया है) के रूप में पुनः शी-र्क रखना समीचीन होगा । प्रस्तावित 2015

विधेयक को भारत के न्याय के अधिक्रम और न्यायालयों की संरचना और ऐसी संस्थाओं में निरंतरता सुनिश्चित करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पुनःप्रारुपित किया गया है । संस्थागत परिवर्तन विद्यमान अवसंरचना में किसी तरह से कमी लाए बिना उन पर केवल अति-अधिरोपित किए जा रहे हैं । भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की व्याप्ति और प्रयोजन को और स्प-ट करने के लिए, उद्देश्यों और कारणों के कथन को भी पुनःप्रारुपित किया गया है । पुनःप्रारुपित विधेयक की प्रति इस रिपोर्ट में उपाबद्ध है ।

3.11 वाणिज्यिक प्रभाग केवल उन उच्च न्यायालयों में गठित किया जाएगा जिनके पास मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता है और एक करोड़ रुपए से अन्यून की धनीय अधिकारिता है । जैसाकि पहले चर्चा की गई है । हम यह सुझाव देते हैं कि मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता वाले सभी पांच उच्च न्यायालयों में एकरुपतः एक करोड़ रुपए धनीय अधिकारिता होनी चाहिए । उन राज्यों या संघ राज्यक्षेत्रों में जहां उच्च न्यायालय मामूली सिविल अधिकारिता का प्रयोग नहीं करता, यह सिफारिश की जाती है कि केंद्रीय सरकार संबद्ध राज्य सरकार और संबद्ध उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के परामर्श से वाणिज्यिक न्यायालय गठित करेगी । उदाहरणार्थ, वाणिज्यिक न्यायालय नागपुर या पूणे जैसे शहरों में गठित किए जा सकेंगे जहां बम्बई उच्च न्यायालय की मामूली सिविल अधिकारिता विस्तारित नहीं है । गठित किए जाने वाले वाणिज्यिक न्यायालयों की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता का अवधारण उच्च न्यायालय और संबद्ध राज्य सरकार के परामर्श से केंद्रीय सरकार द्वारा किया जाएगा किंतु ऐसे वाणिज्यिक न्यायालयों की धनीय अधिकारिता एक करोड़ रुपए होगी ।

3.12 इसके अलावा, जब कभी वाणिज्यिक प्रभाग गठित किया जाता है या जहां वाणिज्यिक न्यायालय गठित किया जा रहा है वहां केंद्रीय सरकार को यथास्थिति, वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के आदेशों या डिक्रियों से अपीलों की सुनवाई के लिए अधिकारितागत उच्च न्यायालय की एक या अधिक प्रभाग न्यायपीठों से मिलकर बने उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग का साथ-साथ गठन करना चाहिए ।

घ. वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के लिए नामांकन तथा वाणिज्यिक न्यायालयों की नियुक्तियां

3.13 उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग में संबद्ध उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के लिए पर्याप्त संख्या में आसीन उच्च न्यायालय न्यायाधीशों का नामनिर्देशन करेगा जिनके पास मुख्य न्यायमूर्ति की राय में वाणिज्यिक विधियों का अपेक्षित अनुभव और विशे-ाज्ञता है । यह उपयुक्त है कि वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के लिए नामनिर्देशित न्यायाधीश अधिमानतः कम से कम दो व-र्ा की अवधि तक अनन्यतः वाणिज्यिक विवादों का ही निपटान करें ।

3.14 जहां तक वाणिज्यिक न्यायालयों का संबंध है, उच्च न्यायालय के पास न्यायाधीशों की नियुक्ति करने और तद्द्वारा वाणिज्यिक न्यायालयों के न्यायाधीशों का एक नया और पृथक काडर सृजित करने की शक्ति होगी । यह सिफारिश की जाती है कि इस काडर के न्यायाधीशों का वेतनमान और फायदे उस विशि-ट राज्य के प्रधान जिला न्यायाधीश से कम नहीं होगी । वाणिज्यिक न्यायालयों के न्यायाधीशों की चयन सुसंगत उच्च न्यायालय द्वारा सु-परिभाि-त भर्ती प्रक्रिया के माध्यम से किया जाएगा। बेहतर प्रतिभा को आकर्ि-त करने के लिए वाणिज्यिक न्यायालय न्यायाधीशों के लिए उच्च वेतनमान और अधिक परिलब्धियों पर विचार किया जाए ।

3.15 वाणिज्यिक न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त सभी न्यायाधीशों से रा-ट्रीय न्यायिक अकादमी और/या सुसंगत राज्य न्यायिक अकादमी से छह मास की अवधि के विशे-ा कार्यक्रम में प्रशिक्षण करने की अपेक्षा होनी चाहिए । प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम अधिवक्ताओं, शिक्षाविदों और न्यायाधीशों के परामर्श से रा-ट्रीय न्यायिक अकादमी द्वारा विकसित किया जाएगा । यह पाठ्यक्रम वाणिज्यिक न्यायालयों के न्यायाधीशों के लिए ही उपयोगी नहीं होना चाहिए बल्कि उच्च न्यायालय न्यायाधीशों की सतत् शिक्षा में भी सहायक होना चाहिए यदि वे ऐसी सुविधा लेने का चयन करें ।

ङ वाणिज्यिक न्यायालयों के लिए संस्थागत व्यवस्था

3.16 जैसाकि पहले उल्लिखित है, उच्च न्यायालयों की संख्या बढ़ाने का प्रस्ताव अतिरिक्त अवसंरचना में वृद्धि करने और उपबंध करने के पहल द्वाराभी सहयोजित किया गया है । उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग को जहां कहीं संभव हो नई अवसंरचना का फायदा लेना चाहिए किंतु अन्यथा संबद्ध उच्च न्यायालयों के परिसरों में अवस्थित होना चाहिए । दूसरी ओर, वाणिज्यिक न्यायालयों के लिए यथासंभव, नियमित सिविल न्यायालयों से पृथक् अवसंरचना और रजिस्ट्रार कार्यालय रखना चाहिए ।

3.17 वाणिज्यिक न्यायालयों को जहां तक भौतिक और तकनीकी अवसंरचना का संबंध है, आदर्श न्यायालय रिपोर्ट द्वारा सिफारिश आदर्श न्यायालय मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुसरण करके संरचित किया जाना चाहिए ।[40]

3.18 वाणिज्यिक न्यायालयों की सभी कार्यवाहियां अंकीय रूप में होनी चाहिए । ई-फाइलिंग और दृश्य-श्रव्य अभिलेख की सभी सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए ।

3.19 न केवल भारत में न्यायपालिका का अध्ययन कर रहे अनुसंधानकर्ताओं द्वारा बल्कि विधि आयोग[41] द्वारा भी भारत में न्यायालयों द्वारा सुसंगत आंकड़े रखने की अपर्याप्तता और अभिलेखों को रखने की दुर्दशा के गंभीर मुद्दे को उजागर किया गया है। समरुप प्ररूप में न्यायालयों द्वारा आंकड़ों का व्यवस्थित संग्रहण और प्रकाशन वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक न्यायालयों के कार्य पालन का निर्धारण करने तथा इन न्यायालयों के कार्यकरण में पारदर्शिता में सुधार करने में सहायक होगा । यह सिफारिश की जाती है कि वाणिज्यिक न्यायालयों, वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक अपीली प्रभागों से प्रत्येक मास संस्थित मामलों की संख्या, संचालित सुनवाई की संख्या, निपटाए गए मामलों की संख्या और आम जनता को आसानी से पहुंचयोग्य रीति में प्रत्येक मामले की प्रास्थिति से संबंधित आंकड़े प्रकाशित करने की अपेक्षा हो । यह

[40] निक राबिन्स, दि इंडियन सुप्रीम कोर्ट वाई दि नम्वर्स, एस.जी.डी. आई. वर्किंग पेयर नं. 2012-2(2012)<http://azimpremjiuniversity.edu.in/SitePages/pdf/LGDI_WorkingPaper_14December2012_The%20indlan-Supreme-Court-by-the-Numbers_NickRobinson.pdf> पर उपलब्ध ।

[41] भारत का विधि आयोग, 245वीं रिपोर्ट, पूर्वोक्त टिप्पण 23, पृ-ठ 10-11.

न्यायपालिका के कार्यकरण में आम जनता का विश्वास बढ़ाएगा और ऐसा प्रयोजन प्राप्त करने में संस्था की सहायता करेगा जिसके लिए इसका गठन किया गया था ।

च. प्रक्रियागत सुधार

(i) वाणिज्यिक न्यायालय और वाणिज्यिक प्रभागों में अपनाई जाने वाली विशे-न प्रक्रिया

3.20.1 संपूर्ण विश्व, विशे-नकर यू. के. और सिंगापुर के वाणिज्यिक न्यायालयों में अपनाई जा रही सिविल प्रक्रिया के सर्वोत्तम प्रैक्टिस का फायदा लेने के लिए, हम यह पाते हैं कि वाणिज्यिक न्यायालयों की सफलता उस सरलता जिसके अनुसार वाणिज्यिक विवाद न्यायालय प्रणाली के माध्यम से आगे बढ़ता है और यह सुनिश्चित करने के लिए न्यायाधीश को दी गई शक्तियां कि विचारण का नि-पक्ष और प्रभावी संचालन किया जाए, पर निर्भर है । इस कारण से, यह सुझाव दिया जाता है कि प्रस्तावित विधेयक की अनुसूची में पूरी तरह वर्णित संशोधन सी.पी.सी. में किए जाएं जिससे उन्हें उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक न्यायालयों और वाणिज्यिक प्रभागों को लागू किया जा सके ।

3.20.2 यह सिफारिश की जाती है कि 2015 विधेयक के पुनःप्रारुपित प्रक्रियात्मक उपबंधों में एक ऐसा खंड है जो यह स्प-ट करता है कि विधेयक के उपबंधों को सी. पी. सी. के राज्य संशोधनों पर अभिभावी होना चाहिए और किसी विरोध की दशा में उच्च न्यायालय के नियम लागू होते हैं । अन्य सभी मामलों में विधेयक के प्रक्रियात्मक उपबंध विद्यमान सी. पी. सी. और उच्च न्यायालय नियम के अनुपूरक होंगे और किसी विरोध की दशा में, विधेयक के प्रक्रियात्मक उपबंध अन्य विधानों पर अभिभावी होंगे ।

3.20.3. 2015 विधेयक में सुझाए गए कुछ मुख्य नियामक परिवर्तन इस प्रकार है :

(क) लिखित कथन जो सी. पी. सी. के आदेश 5 और 8 द्वारा विहित तीस दिनों की अवधि के भीतर फाइल नहीं किए गए हैं, (न्यायालय के लिखित आदेश और खर्चे

के संदाय पर) इसके पश्चात् फाइल किए जा सकते हैं, तथापि, किसी भी दशा में वे समन के दिन से एक सौ बीस दिनों के परे फाइल नहीं किए जा सकते । ऐसे मामलों में प्रतिवादी लिखित कथन फाइल करने का अधिकार समपहृत करेंगे और न्यायालय अभिलेख पर लिखित कथन लेने की अनुज्ञा नहीं देगा ।

(ख) सी. पी. सी. के अधीन प्रक्रियाओं का पालन करते हुए अभिवचनों और दस्तावेजों का फाइल किया जाना किंतु कठोर समयबद्धता के अधीन रहते हुए यह सुनिश्चित करने के लिए उलझाऊ और असंगत अभिवचनों को निकालने की शक्ति न्यायालय को देना कि विचारण सुसंगत मुद्दों पर ही हो ।

(ग) ऐसे प्रकटन और निरीक्षण मानक जो पक्षकारों को दक्षपूर्ण ढंग से दस्तावेजों की बरामदगी पूरा करने के लिए अनुज्ञात करेंगे ।

(घ) ''संक्षिप्त निर्णय'' की नई और पृथक् प्रक्रिया लागू की जाए जहां पक्षकार विचारण के आरंभ के पूर्व अर्थात् विवाद्यकों की विरचना के समय किसी बिंदु पर संक्षेपतः न्यायालय के निर्णय की मांग कर सकते हैं ।

(ङ) न्यायालय को मामला प्रबंध सुनवाई संचालित करने के लिए सशक्त किया जाएगा जहां उसके पास विनिर्दि-ट समय-सीमा के भीतर विचारण का उचित संचालन सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित सभी आवश्यक शक्तियां होंगी । इसमें अन्य बातों के साथ-साथ, सुनवाई के लिए तारीखें नियत करने की शक्ति और यह विनिश्चित करना कि किन विवाद्यकों का विचारण किया जाए और साक्षियों को समन किया जाए, सम्मिलित होगा । इसके अलावा, न्यायालय को मामला प्रबंध सुनवाई में उपवर्णित निदेशों का पालन करने की असफलता के लिए पक्षकारों पर खर्चा और अन्य शास्तियां अधिरोपित करने के लिए सशक्त किया जाएगा ।

(च) ''घटना की दशा में खर्चा'' का उपबंध करने के लिए खर्चे की नई प्रणाली लागू की जाए ।

(छ) समयबद्ध मौखिक बहस के साथ अनुपूरक रुप में लिखित निवेदन फाइल

करना आज्ञापक होगा ।

(ज) बहस की समाप्ति से नब्बे दिनों के भीतर निर्णय देने की समयबद्धता होगी ।

3.20.4 उपरोक्त प्रासमिक परिवर्तनों के साथ ऐसे प्रैक्टिस निदेश जोड़े जाएंगे जो उच्च न्यायालयों द्वारा जारी किए जाएंगे जिससे कि वाणिज्यिक न्यायालयों और वाणिज्यिक प्रभाग के दक्षपूर्ण और निर्विध्न कार्यकरण को सुकर बनाया जा सके । ऐसे प्रैक्टिस निदेश ऐसी प्रक्रियाओं की बावत जो वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय को लागू होंगे, न्यायाधीश और प्रैक्टिस कर रहे अधिवक्ता दोनों के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करेंगे ।

3.20.5 मामला प्रबंध पर आयोग की सिफारिशें **रामेश्वरी देवी** बनाम **निर्मला देवी** वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निदेशों के अनुरुप हैं जहां न्यायालय ने यह मत व्यक्त करते हुए मामला प्रबंध का पक्षपो-ण किया कि :

> ‘‘वादपत्र फाइल करने के समय, विचारण न्यायालय को पूरी समय-सारणी तैयार करनी चाहिए और लिखित कथन फाइल करने से लेकर निर्णय सुनाने तक वाद के सभी प्रक्रमों के लिए तारीखें नियत करनी चाहिए तथा न्यायालय को यथासंभव उक्त तारीखों और उक्त समय का कड़ाई से पालन करना चाहिए । यदि कोई अंतवर्ती आवेदन फाइल किया जाता है तो इसका निपटान स्वयं उक्त वाद में नियत सुनवाई की उक्त तारीखों के बीच में निपटाया जा सकता है जिससे कि मुख्य वाद के लिए नियत तारीखें अस्त-व्यस्त न हो सके ।[42]

(ii) लागत

3.21.1 भारत के उच्चतम न्यायालय[43] और विधि आयोग[44] द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसार, निरर्थक मुकदमेबाजी के विरुद्ध सार्थक निवारक के रूप में

---

[42] (2011) 8 एस. सी. सी. 249, पैरा 52 पर.

[43] **संजीव कुमार जैन** बनाम **रघुवीर सरन चैरिटेबुल ट्रस्ट, (2012) । एस. सी. सी. 455.**

[44] भारत का विधि आयोग, सिविल मुकदमेबाजी में खर्चा रिपोर्ट सं. 240 (2012).

घटनाओं की दशा में खर्चा लगाया जाएगा । **सहारा** वाले मामले के निर्णय में, न्यायालय ने यह मतव्यक्त किया :

> "वह [अबोध क-ट झेल रहा वादकारी] अपने दावे के लिए काउंसेल को समझाने और उन्हें तैयार कराने में अमूल्य समय खर्च करता है । ऐसा समय जो उसे अपने कार्य या अपने परिवार के साथ बिताना चाहिए, उसकी अपनी किसी गलती के बिना व्यर्थ हो जाता है । क्या वादकारी को उसके लिए जिसके व्यर्थ हो जाने में उसकी कोई गलती नही थी, के लिए प्रतिपूर्ति नहीं दी जानी चाहिए ? विधायिका को यह सुझाव दिया गया है कि ऐसा वादकारी जो सफल होता है, को उसके द्वारा जो पराभूत हो गया है, से क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिए । विधायिका को यह सुझाव दिया गया है कि ऐसा तंत्र विरचित करे कि ऐसा कोई व्यक्ति जो विवेकाहीनता से मुकदमेबाजी आरंभ करता है और जारी रखता है, इसके लिए भुगतान करे । यह सुझाव दिया जाता है कि विधायिका को "अनिवार्य खर्चें की संहिता....." लागू करने पर विचार करना चाहिए । परिणामों को ही लागू करने का प्रयास किया जाए यदि वादकारी की धारणा गलत थी और यदि उसका हेतुक अनुचित और अविधिसम्मत पाया जाए तो उसे इसके लिए भुगतान करना होगा ।[45]

3.21.2 **रामेश्वरी देवी** बनाम **निर्मला देवी** वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि खर्चा अधिरोपित करते समय एक अन्य कारक पर भी विचार किया जाए कि "कितने समय तक प्रतिवादी या प्रत्यर्थी को विभिन्न न्यायालयों में मुकदमे का प्रतिवाद करने और प्रतिरक्षा करने के लिए विवश किया गया ।[46]

3.21.3 अतः, प्रस्तावित 2015 विधेयक में यह सुनिश्चित करने के लिए एक खंड होगा कि सभी मामलों में निश्चय ही खर्चा घटना की दशा में होगा उसके सिवाय जहां न्यायालय लिखित में स्प-ट करते हुए कारण देता है कि खर्चा क्यों नहीं लगाया जाना चाहिए । विधि आयोग द्वारा अपनी 246वीं रिपोर्ट में माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम,

---

[45] **सुब्रोत राय सहारा** बनाम **भारत संघ,** (2014) 8 एस. सी. सी. 470, पैरा 150.

[46] (2011) 8 एस. सी. 249, पैरा 55.

1996 के संशोधनों में प्रस्तावित खर्चे के मोडल को भी इस विधेयक में अंगीकार किया जाएगा । यह सी. पी. सी. की धारा 35 और धारा 35-क को संशोधित करने के बारे में है जो खर्चे के अधिनिर्णय को शासित करता है ।

3.12.4 खर्चा अधिनिर्णीत करते समय माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के संशोधनों में किए गए प्रस्ताव को न्यायालय/मध्यस्थ अधिकरण निम्नलिखित सहित सभी परिस्थितियों पर ध्यान देगा -

(क) सभी पक्षकारों का आचरण ;

(ख) क्या पक्षकार को अपने पक्षकथन के एक भाग पर ही सफलता मिली है, यद्यपि पक्षकार संपूर्ण रूप से सफल नहीं रहा है ;

(ग) क्या पक्षकार ने मामले के निपटान में विलंब कारित करने के लिए निरर्थक प्रति दावे किए थे ;

(घ) क्या पक्षकार द्वारा मामले को सुलझाने के लिए कोई युक्तियुक्त प्रस्थापना की गई है ; और

(ङ) क्या पक्षकार ने निरर्थक दावा किया था और न्यायालय का समय खर्च करने के लिए खिजाऊ, कार्यवाही संस्थित की थी ।

3.21.5 "खर्चा" से यहां निम्नलिखित से संबंधित युक्तियुक्त खर्चा अभिप्रेत होगा:

(क) मध्यस्थ, न्यायालय और साक्षियों की फीस और व्यय ;

(ख) विधिक फीस और व्यय ; और

(ग) कार्यवाही के संबंध में उपगत कोई अन्य व्यय ।

3.21.6 वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक न्यायालयों को उपरोक्त प्रकार से खर्चा अधिनिर्णीत करने और खर्चा अधिनिर्णीत न करने के लिए कारण बताना आज्ञापक बनाने के लिए भी सशक्त करने के लिए उपयुक्त परिवर्तनों के साथ उपरोक्त मोडल अंगीकार करना प्रस्तावित है । यह आशयित है कि यह पक्षकारों को निरर्थक दावे करने

या खिजाऊ, मुकदमे कर तद्द्वारा विचाराधीनता और विलंब के भार को जोड़ने से निवारित करेगा ।

(iii) न्यायलय फीस

3.22 विद्यमान खर्चा प्रणाली की तरह, विद्यमान न्यायालय फीस प्रणाली भी वादकारियों को कार्यवाहियों में विलंब के लिए मिथ्या और खिजाऊ दावे फाइल करने से या स्थगन चाहने से भय दिखाकर निवारित नहीं करती । ऐसे वादकारी जो मामलों को लम्बा खींचते हैं, और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करते हैं, वही न्यायालय फीस अदा करते हैं जैसा वादकारी जो ऐसे आचरण में लिप्त नहीं है । स्थिति से निपटने के लिए सिंगापुर की तरह न्यायालय फीस उनके मामले के संचालन में वादकारियों द्वारा लिए गए समय से संबद्ध करने की आवश्यकता है, जैसा पूर्व अध्याय में चर्चा की गई है । अतः, राज्य सरकार भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 2 की प्रविन्टि 3 के अधीन अपने विधायी क्षेत्र के आलोक में न्यायालय फीस प्रणाली की पुनः परीक्षा पर विचार कर सकेगी ।

(4) अपील

3.23.1 विधेयक इस समय उच्चतम न्यायालय में सीधे अपील करने का उपबंध करता है । यह उस उपबंध से प्रतिस्थापित करने के लिए प्रस्तावित है जो यह अधिदेश देता है कि वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय के आदेशों से अपील सी. पी. सी. के आदेश 43 के अधीन के सिवाय और वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के अंतिम निर्णय से कोई अपील नहीं की जाएगी । ऐसी अपीलें अधिकारितागत वाणिज्यिक अपीली प्रभाग को ही की जाएंगी ।

3.23.2 आगे यह सिफारिश की जाती है कि किसी अन्य विधि के होते हुए भी, अधिकारितागत चुनौती पर आदेश सहित वाणिज्यिक न्यायालय के अंतवर्ती आदेश के विरुद्ध कोई सिविल आवेदन या याचिका ग्रहण नहीं की जाएगी । प्रत्येक अंतवर्ती आदेश के विरुद्ध सिविल पुनरीक्षण आवेदन या याचिकाएं बारंबार फाइल कर मामला प्रबंध

सुनवाई के लिए नियत समय-सारणी को निरर्थक बनाने से निवारित करना यहां इसका प्रयोजन है । मामलों के गतिरोध के संभाव्यताओं को हटाकर विधेयक मामलों का शीघ्र निपटान सुनिश्चित करने की आशा करता है ।

3.23.3 फिर भी, वाणिज्यिक न्यायालय या वाणिज्यिक प्रभाग के नि-कर्-ा से किसी अपील की अनुज्ञा दी जाएगी कि प्रश्नगत विवाद वाणिज्यिक विवाद है क्योंकि पक्षकारों के प्रति कोई पक्षपात कारित नहीं होता जब वाणिज्यिक न्यायालय या वाणिज्यिक प्रभाग पाता है कि विवाद एक वाणिज्यिक विवाद है ।

(v) अतिरिक्त उपबंध

क. माध्यस्थम्

3.24.1 विधि आयोग ने "माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के संशोधन" पर अपनी 246वीं रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ-साथ, माध्यस्थम् कार्यवाहियों में न्यायालय के हस्तक्षेप को कम करने हेतु ए. एंड सी. अधिनियम में परिवर्तन के सुझाव दिए हैं ।[47]

3.24.2 आयोग की 246वीं रिपोर्ट ने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 2(ङ) में "न्यायालय" की परिभा-ा को मूल्य पर ध्यान दिए बिना सभी अंतररा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थमों के संदर्भ में "उच्च न्यायालय" के अभिप्राय हेतु संशोधन करने की सिफारिश की है । उस रिपोर्ट के सुझावों और प्रस्तावित संशोधनों को ध्यान में रखते हुए ऐसे माध्यस्थमों की बावत जिसमें वाणिज्यिक विवाद अंतवर्लित हैं, निम्नलिखित सुझाव देते हैं ।

3.24.3 पहला, यह सिफारिश किया जाता है कि एक करोड़ रुपए से अधिक के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित अंतररा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के अधीन ऐसे माध्यस्थम् से उद्भूत किसी आवेदन या अपील जो उच्च न्यायालय में फाइल किया गया है, की सुनवाई उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाव द्वारा की जाएगी जहां उच्च न्यायालय में ऐसा वाणिज्यिक प्रभाग गठित किया

[47] भारत का विधि आयोग, "माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के संशोधन" रिपोर्ट सं. 246 (2014)।

गया है । वाणिज्यिक प्रभाग के अभाव में, ऐसे अंतरर्रा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थमों से संबंधित आवेदन या अपीलों की सुनवाई उच्च न्यायालय के नियमित न्यायपीठ द्वारा की जाएगी ।

3.24.4 दूसरा, एक करोड़ रुपए से अधिक के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित धरेलू माध्यस्थमों के मामले में, आवेदन या अपीलें धनीय अधिकारिता के आधार पर या तो उच्च न्यायालय या सिविल न्यायालय (जो उच्च न्यायालय नहीं है) के समक्ष की जा सकेंगी । यह सिफारिश की जाती है कि माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के अधीन ऐसे माध्यस्थमों से उद्भूत सभी आवेदन या अपीलें जो उच्च न्यायालय के मूल पक्ष में फाइल की गई है, की सुनवाई उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा की जाएगी जहां उच्च न्यायालय में ऐसे वाणिज्यिक प्रभाग गठित किए गए हैं । तथापि, वाणिज्यिक प्रभाग गठित किए जाने के अभाव में, उच्च न्यायालय की नियमित न्यायपीठ घरेलू माध्यस्थम् से उद्भूत ऐसे आवेदनों या अपीलों की सुनवाई करेगी । यदि ऐसे घरेलू माध्यस्थम् में आवेदन या अपील उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर नहीं है और साधारणतः सिविल न्यायालय (जो उच्च न्यायालय नहीं है) के समक्ष की जाएगी और यदि ऐसे माध्यस्थम् की बावत राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता का प्रयोग करने वाला वाणिज्यिक न्यायालय है तो ऐसा आवेदन या अपील ऐसे वाणिज्यिक न्यायालय के समक्ष फाइल की जाएगी और सुनवाई की जाएगी ।

3.24.5 तीसरा, यह सिफारिश की जाती है कि वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के आदेश के विरुद्ध की गई एक करोड़ रुपए से अधिक के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित माध्यस्थम् मामलों के संबंध में माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के अधीन सभी अपीलों की सुनवाई और निपटान वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी, जहां अधिकारितागत उच्च न्यायालय में वाणिज्यिक अपीली प्रभाग का गठन किया गया है ।

ख. वाणिज्यिक प्रभागों द्वारा वाणिज्यिक विवादों से संबंधित रिट याचिकाओं की सुनवाई

3.24.6 उपरोक्त वाणिज्यिक अपीली प्रभाग में निहित अधिकारिता के अलावा, यह सिफारिश की जाती है कि वाणिज्यिक विवाद जिनकी अपीलें प्रतिलिप्यधिकार अधिनियम, 1957 या व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 जैसे कानून के अधीन अधिकरण से उच्च न्यायालय को की गई हैं, की सुनवाई और निपटान वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा किया जाए । जहां अधिकरण का आदेश वाणिज्यिक विवाद से संबंधित है और अपील या रिट याचिका के माध्यम से ऐसे आदेश की चुनौती उच्च न्यायालय के समक्ष दी गई है, यह सिफारिश की जाती है कि ऐसे विवादों की भी सुनवाई और निपटान वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी । उपबंधों के क्रियान्वयन में किसी संदिग्धता के निवारण के लिए, ऐसे अधिकरणों के नाम विधि में विनिर्दि-ट किए जाएंगे और उदाहरणार्थ, प्रतिस्पर्धी अपील अधिकरण या बौद्धिक संपत्ति अपील बोर्ड को सम्मिलित किया जाएगा ।

3.24.7 यहां यह स्प-ट किया जाता है कि अनुच्छेद 226 और/या 227 के अधीन सभी रिट याचिकाएं जो किसी रीति से वाणिज्यिक विवाद से संबद्ध है को स्वतः वाणिज्यिक अपीली प्रभाग को निर्दि-ट नहीं किया जाए । यह संभव है कि लोकहित वाद कुछ अवसरों पर वाणिज्यिक करार को निर्दि-ट करें किंतु ऐसे विवाद को स्वतः वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के समक्ष नहीं प्रस्तुत किया जाना चाहिए चूंकि अंतवर्लित विवाद्यकों के व्यापक होने की संभावना है और विभिन्न विचार की अपेक्षा हो सकती है । फिर भी, हम संबद्ध उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के विवेक पर यह निर्णय छोड़ते हैं कि ऐसे लोकहित वाद और अन्य रिट याचिकाओं को उसके समक्ष रखें जिसमें वाणिज्यिक विवाद अंतवर्लित हो और उस विस्तार तक उसकी सुनवाई और विनिश्चय वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाए ।

ग. अन्य विधि द्वारा सिविल न्यायालय अधिकारिता का अपवर्जन

3.24.8 वर्तमान में, विधेयक किसी विवाद जो सिविल न्यायालय की अधिकारिता से बाहर है को वाणिज्यिक प्रभाग की अधिकारिता से अपवर्जित करता है । यह सिफारिश की जाती है कि इस उपबंध को प्रतिधारित किया जाए ।

अध्याय 4

नि-क-र्ा और सिफारिशों का संक्षिप्तांश

4.1 जहां भारत में वाणिज्यिक न्यायालयों की आवश्यकता सुस्प-ट है वहां ऐसे न्यायालयों की संस्था को भारत में सिविल न्याय प्रणाली के सुधार के लिए एक सोपान के रूप में देखा जाना चाहिए । सुधारों की संरचना विद्यमान संस्थाओं को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए और विद्यमान विधिक रुपरेखा के भीतर उनमें सुधार को केंद्रित करना चाहिए ।

4.2 उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग जिनकी सिफारिश की गई है, भारत में सिविल न्याय प्रणाली में सुधार करने के व्यापक लक्ष्य के प्रमुख परियोजना को पूरा करने के आशय से है । लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि मामलों का निपटान शीघ्र, नि-पक्ष और वादकारी के युक्तियुक्त खर्चे पर किया जाए । यह न केवल वादकारी को फायदा पहुंचाता है बल्कि संभाव्य वादकारी (विशे-ाकर जो व्यापार और वाणिज्य में लगे हैं) को भी वाणिज्यिक विवादों के शीघ्र समाधान द्वारा कारित पिछले ढेर में कमी से फायदा पहुंचता है । परिणामस्वरूप, यह आर्थिक वृद्धि को आगे बढ़ाएगा, विदेशी विनिवेश में वृद्धि करेगा और भारत को कारबार करने के लिए एक आक-र्ाक केंद्र बनाएगा । इसके अतिरिक्त, यह समग्रतः अर्थव्यवस्था को फायदा पहुंचाता है क्योंकि शीघ्र संतुलित विवाद समाधान तंत्र, अर्थव्यवस्था के चहुंमुखी विकास के लिए अनिवार्य है ।

4.3 उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, विधि आयोग की मुख्य सिफारिशों के संक्षिप्तांश को नीचे दोहराया जा रहा है :

(क) वाणिज्यिक विवादों को व्यापकतः ऐसे परिभा-ित किया जाना चाहिए जिसका अभिप्राय वाणिज्यिक दस्तावेजों, संयुक्त उद्यम और भागीदारी करार ; बौद्धिक संपत्ति अधिकार ; बीमा और अन्य ऐसे क्षेत्र जैसा प्रस्तावित 2015 विधेयक में परिभा-ित किया गया है, जैसे व्यापारियों, बैंकरों, वित्तपो-ाकों और वणिकों के

मामूली संव्यवहार के विवाद से हो ;

(ख) वाणिज्यिक प्रभाग केंद्रीय सरकार द्वारा ऐसे उच्च न्यायालयों में गठित किया जाए जो एक करोड़ रुपए या अधिक के विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवादों को ग्रहण करने के लिए कलकत्ता जैसे मामूली साधारण सिविल अधिकारिता का पहले से ही प्रयोग कर रहे हैं । वाणिज्यिक प्रभागों को (i) जिला न्यायालय से अवर किसी न्यायालय में लाए गए कानून द्वारा अनुबंधित और उच्च न्यायालय के मूल पक्ष में फाइल और (ii) डिजाइन अधिनियम, 2000 की धारा 22(4) या पेटेंट अधिनियम, 1970 की धारा 104 के आधार पर उच्च न्यायालय को अंतरित, वाणिज्यिक विवादों से संबंधित सभी वादों और आवेदनों पर अधिकारिता का प्रयोग करना चाहिए ।

(ग) वाणिज्यिक न्यायालयों को ऐसे (i) राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में गठित किया जाए जहां उच्च न्यायालयों में मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता नहीं है, जैसे बैंगलोर और (ii) उन क्षेत्रों में जहां उच्च न्यायालयों (जिनके पास पहले से ही आरंभिक सिविल अधिकारिता हैं) की आरंभिक सिविल अधिकारिता का विस्तार नहीं होता जैसे पुण या मदुरै । ऐसे वाणिज्यिक न्यायालयों की न्यूनतम धनीय अधिकारिता भी एक करोड़ रुपए या अधिक होगी ।

(घ) आरंभिक अधिकारिता रखने वाले उच्च न्यायालयों की धनीय अधिकारिता बढ़ाकर एकरुपतः एक करोड़ रुपए की जाए और वाणिज्यिक प्रभाग तभी गठित किया जाए जब इस प्रकार धनीय अधिकारिता बढ़ाई गई हो । परिणामतः, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और मद्रास उच्च न्यायालयों में धनीय अधिकारिता एक करोड़ रुपए बढ़ाए जाने पर वाणिज्यिक प्रभागों का गठन किया जाए ।

(ङ) वाणिज्यिक विवादों से संबंधित मामलों का न्यायनिर्णयन करने के लिए वाणिज्यिक प्रभागों या वाणिज्यिक न्यायालयों को कोई अधिकारिता न हो जहां सिविल न्यायालय की अधिकारिता व्यक्ततः या विवक्षितः विधि के अधीन बाधित है।

(च) वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय का गठन वाणिज्यिक अपील के गठन के साथ-साथ होना चाहिए । वाणिज्यिक अपीली प्रभाग वाणिज्यिक प्रभागों या वाणिज्यिक न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों या डिक्रियों के विरुद्ध अपीलों की सुनवाई करेगा । वाणिज्यिक अपीली प्रभाग अधिकारिता के मुद्दे पर आदेश सहित (जो डिक्री के विरुद्ध अपील में ही उठाया जा सकता है) वाणिज्यिक न्यायालय के किसी अंतवर्ती आदेश के विरुद्ध कोई सिविल पुनरीक्षण आवेदन या याचिका ग्रहण नहीं करेगा । अपीलें माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 और सी. पी. सी. के आदेश 43 के उपवर्णित आदेशों के विरुद्ध ही की जाएंगी और किसी अन्य आदेशों के विरुद्ध नहीं ।

(छ) न्यायमूर्ति उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग में वाणिज्यिक विवादों के निपटान की विशे-ाज्ञता और अनुभव रखने वाले उच्च न्यायालय के आसीन न्यायाधीशों को अधिमानतः दो व-ाों की अवधि के लिए नामनिर्दि-ट करेगा ।

(ज) वाणिज्यिक न्यायालयों में वाणिज्यिक मुकदमों में प्रमाण्य विशे-ाज्ञता और अनुभव वाले अधिवक्ताओं और न्यायाधीशों में से उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त विशे-ा रूप से प्रशिक्षित न्यायाधीशों को लगाया जाए ।

(झ) सी. पी. सी. में किसी बात के होते हुए, वाणिज्यिक विवाद से संबंधित वाद में विनिर्दि-ट मूल्य के प्रतिवाद के फाइल करने का परिणाम यथास्थिति, वाणिज्यिक न्यायालय या वाणिज्यिक प्रभाग को वाद का अंतरण होगा ।

(ञ) उच्च न्यायालयों और सिविल न्यायालयों में एक करोड़ रुपए से अधिक के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित सभी लंबित वाद और आवेदनों को यथास्थिति सुसंगत वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय को अंतरित किया जाएगा । यदि अंतरण प्रस्तावित उपधाराओं द्वारा अनुध्यात रीति में क्रियान्वित नहीं किया गया है, तो वाणिज्यिक अपीली प्रभाग समुचित आदेश पारित कर सकता है ।

(ट) विधेयक को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 को संशोधित कर वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालयों में मामलों के संचालन के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को सरल और कारगर बनाना होगा जिससे कि वाणिज्यिक मामलों के निपटान की दक्षता में सुधार हो और विलंब में कमी आए । वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक न्यायालयों को यथा लागू संशोधित सी. पी. सी. विरोध की दशा में विद्यमान उच्च न्यायालय नियमों और सी. पी. सी. के अन्य उपबंधों पर अभिभावी होंगे । सी. पी. सी. में प्रस्तावित कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तनों को नीचे सूचीबद्ध किया जा रहा है :

(i) आदेश 5, नियम 1(1) और आदेश 8, नियम अब प्रतिवादियों को लिखित कथन फाइल करने के लिए तीस दिनों का और न्यायालय के समाधान और खर्चे के संदाय के अधीन रहते हुए अतिरिक्त नब्बे दिनों का उपबंध करता है । तथापि, नब्बे दिन की समयावधि की समाप्ति पर (जो समन की तारीख से एक सौ बीस दिन है), प्रतिवादी का लिखित कथन फाइल करने का अधिकार समपहृत कर देंगे और न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने की अनुज्ञा नहीं दे सकेंगे ।

(ii) आदेश 11 के अधीन प्रकटन और निरीक्षण मानकों को संशोधित किया जाए जिससे कि पक्षकार (पूछताछ करने वालों सहित) दक्षतापूर्वक दस्तावेजों की बरामदगी प्राप्त करें और पक्षकारों की शक्ति, कब्जे, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों की प्रतियों के लिए आवेदन करें । इसके अतिरिक्त, सभी दस्तावेजों को प्रकट करने की जानबूझकर या उपेक्षापूर्ण असफलता के लिए या निरीक्षण के लिए दस्तावेजों के दो-नपूर्ण या अयुक्तियुक्त प्रतिधारण के लिए व्यतिक्रमी पक्षकारों के विरुद्ध अनुकरणीय खर्चा अधिरोपित करने के लिए न्यायालयों को सशक्त किया जाए ।

(iii) मौखिक साक्ष्य अभिलिखित किए बिना किसी वाणिज्यिक विवाद वि-नयक दावे को विनिश्चित करने के लिए न्यायालयों को अनुज्ञात करने के लिए "संक्षिप्त निर्णय" के लिए नई प्रक्रिया लागू की जाए, जब तक विवाद्यक विरचित करने के पूर्व संक्षिप्त निर्णय के लिए आवेदन फाइल किया गया है । न्यायालयों को "सशर्त आदेश करने के लिए भी सशक्त किया जाए जहां आवश्यक हो ।"

(iv) "घटना की दशा में खर्चा" की नई खर्चा व्यवस्था इस व्यापक निदेशों के साथ कि क्या खर्चा गठित करता है और ऐसी कौन सी परिस्थितियां हैं जिन पर न्यायालयों को खर्चे पर आदेश करते समय ध्यान देना चाहिए, लागू की जाए । सफल पक्षकार को उस पर अधिरोपित खर्चा भी मिलेगा यदि उदाहरणार्थ, दावा/प्रतिरक्षा के भाग विचारण के दौरान निरर्थक साबित होते हैं ।

(v) ऐसी प्रक्रिया में परिवर्तन जहां वाद में ब्याज और साक्ष्य को फाइल करने और आगे वाणिज्यिक विवाद में अभिवचन के सत्यापन का उपबंध करने की ईप्सा की गई है ।

(vi) आदेशों के अननुपालन के परिणाम सहित मामला प्रबंध सुनवाई की विस्तृत प्रक्रियाएं लागू की जाएं ।

(vii) मौखिक बहस के आरंभ के पूर्व सप्ताह के भीतर समयबद्ध मौखिक बहस के साथ आज्ञापक रूप से लिखित कथन फाइल किया जाए ।

(viii) न्यायालयों को लिखित रूप से अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से साक्ष्य का नियंत्रण करने, प्रारूपित करने या अस्वीकार करने के लिए सशक्त किया जाए ।

(ix) बहसों की समाप्ति से नब्बे दिनों के भीतर निर्णय का समयबद्ध परिदान लागू किया जाए ।

(x) ऐसे वादों के लिए जो वाणिज्यिक न्यायालय या वाणिज्यिक प्रभाग को अंतरित किए गए हैं, प्रक्रियात्मक उपबंध विचारण के उस बिंदु से ही लागू होंगे जिस पर वे अंतरित किए गए हैं ।

(xi) अधिकारितागत उच्च न्ययालयों द्वारा जारी प्रैक्टिस निदेशों द्वारा प्रक्रियात्मक नियम संपूरित किए जाएं ।

(xii) वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय जहां संभव हो, नए अवसंरचना के फायदे ले सकते हैं और मोडल न्यायालय रिपोर्ट में अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के साथ-साथ "आदर्श न्यायालय" के रूप में चलाएं ।

(xiii) रा-ट्रीय न्यायिक अकादमी और राज्य न्यायिक अकादमियां उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक न्यायालय या वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के न्यायाधीशों के प्रशिक्षण और सतत शिक्षा के लिए आवश्यक सुविधाएं सृजित करेंगे ।

(xiv) विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद जो उच्च न्यायालय में फाइल किए गए हैं, से संबंधित अंतरा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थमों के सभी आवेदनों या अपीलों की सुनवाई और निपटान उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा किया जाएगा जहां ऐसे वाणिज्यिक अपीली प्रभाग गठित किए गए हैं ।

(xv) विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद जो उच्च न्यायालय के मूल पक्ष में फाइल किए गए हैं, से संबंधित घरेलू माध्यस्थमों के सभी आवेदनों या

अपीलों की सुनवाई या निपटान उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी जहां ऐसे वाणिज्यिक अपीली प्रभाग गठित किए गए हैं ।

(xvi) विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद जो साधारणतः सिविल न्यायालय (जो उच्च न्यायालय नहीं है) में लाया जाएगा, से संबंधित घरेलू माध्यस्थमों के सभी आवेदनों या अपीलों की सुनवाई और निपटान ऐसे माध्यस्थमों पर राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता का प्रयोग करने वाले वाणिज्यिक न्यायालय द्वारा किया जाएगा ।

(xvii) वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के किसी आदेश या डिक्री के विरुद्ध की गई सभी अपीलों की सुनवाई और निपटान सुसंगत उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा अधिमानतः ऐसे अपील के फाइल करने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर किया जाएगा । वाणिज्यिक अपीली प्रभाग उसके समक्ष फाइल किसी रिट याचिका का निपटान छह मास की अवधि के भीतर करने का प्रयास करेगा ।

(xviii) वाणिज्यिक न्यायालय के किसी अंतवर्ती आदेश जिसके अंतर्गत अधिकारिता के मुद्दे पर आदेश है, के विरुद्ध कोई सिविल पुनरीक्षण आवेदन या याचिका ग्रहण नहीं किया जाएगा ।

(xix) कतिपय विनिर्दि-ट अधिकरण (प्रतिस्पर्धी अपील अधिकरण या बौद्धिक संपत्ति अपील बोर्ड) के आदेशों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में फाइल की गई रिट याचिकाएं और अपीलों की सुनवाई वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी, यदि ऐसी रिट या अपील की वि-नय वस्तु वाणिज्यिक विवाद से संबंधित है ।

(xx) विधि आयोग भारत के संविधान की सातवीं अनुसचू की सूची 2 की प्रविन्टि 3 के अधीन राज्य सरकारों द्वारा उनके विधायी क्षेत्र के आलोक में न्यायालय फीस व्यवस्था पर पुनर्विचार करने का प्रस्ताव करता है ।

ह0/-
(न्यायमूर्ति ए. पी. शहा)
अध्यक्ष

ह0/-	ह0/-	ह0/-
(न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर)	(प्रो. (डा.) मूलचंद शर्मा)	(न्यायमूर्ति ऊना मेहरा)
सदस्य	सदस्य	सदस्य

ह0/-	ह0/-	ह0/-
(डा. एस. एस. चाहर)	(पी. के. मल्होत्रा)	(डा. संजय सिंह)
सदस्य-सचिव	पदेन-सदस्य	पदेन सदस्य

उपाबंध

उच्च न्यायालय वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय विधेयक, 2015

वाणिज्यिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए उचच न्यायालयों में वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग का गठन करने और देश के अन्य भागों में वाणिज्यिक न्यायालयों का सृजन करने, वाणिज्यिक विवादों को विनिश्चित करने में अपनाई गई प्रक्रिया और इससे संबद्ध और आनु-ांगिक वि-ायों का उपबंध करने के लिए विधेयक ।

1. यह देखा गया है कि काफी आर्थिक क्रियाकलाप के कारण वाणिज्यिक विवादों की संख्या और मूल्य में महत्वपूर्ण वृद्धि हो रही है ;

2. यह देखा गया है कि उच्च मूल्य वाणिज्यिक विवाद ऐसे सिविल विवाद का अधिक अनुपात गठित करते हैं जो देश के उच्च न्यायालयों और विभिन्न सिविल न्यायालयों के समक्ष लंबित रहते हैं ;

3. अतिरिक्त आर्थिक वृद्धि, अधिक विदेशी विनिवेश सुनिश्चित करने और भारत को कारबार करने के लिए आकर्-ाक स्थान बनाने के लिए, यह आवश्यक है कि वाणिज्यिक विवादों का विनिश्चय नि-पक्ष, प्रभावी और समयबद्ध रीति से किया जाए ;

4. यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वाणिज्यिक विवादों का न्यायनिर्णयन व्यापक और वाणिज्य में लगे उन लोगों के लिए शीघ्र राहत सुनिश्चित करता है जिससे कि प्रभावी उपचार की कमी से व्यापार और वाणिज्य की वृद्धि में अड़चन न आए और जो विधि और साम्या के उनके अधिकारों को नकारात्मक न ठहराएं ;

5. अंतरर-ाट्रीय सर्वोत्तम प्रैक्टिस के अनुसार यह उपयुक्त है कि नए

न्यायालय सृजित किए जाएं और वाणिज्यिक विवादों को विनिश्चित करने के लिए वाणिज्यिक विधि में प्रशिक्षित न्यायिक मानवशक्ति उपलब्ध कराया जाए जिससे कि वाणिज्यिक विवादों की बढ़ती विचाराधीनता को कम किया जा सके और ऐसे मामलों के प्रभावी और शीघ्र निपटान के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके ; और

6. ऐसी प्रक्रियात्मक विधियों में सारवान परिवर्तनों का उपबंध करना आवश्यक है जो इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वाणिज्यिक विवादों को विनिश्चित करने के लिए लागू किए जाने योग्य हैं ।

अतः, अब भारत गणराज्य के छियासवें वर्ष में यह अधिनियमित हो ।

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, लागू होना और आरंभ

(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम उच्च न्यायालयों का वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग तथा वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 है ।

(2) यह जम्मू और कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर लागू होगा ।

(3) यह उस तारीख से प्रवृत्त होगा जो केंद्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ।

2. परिभा-ाएं

(1) इस अधिनियम में, जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, -

(क) ''वाणिज्यिक विवाद'' से निम्नलिखित से उद्‌भूत विवाद अभिप्रेत है :

(i) वाणिज्यिक दस्तावेज जिसके अंतर्गत ऐसे दस्तावेजों का निर्वचन और प्रवर्तन सम्मिलित है, से संबंधित जैसे मर्चेन्ट, बैंकर, पूंजीपति और व्यापारी के साधारण संव्यवहार ;

(ii) माल या सेवा का निर्यात या आयात ;

(iii) नौ-अधिकरण और सामुद्रिक विधि से संबंधित मुद्दे ;

(iv) वायुयान, वायुयान ईंजन, वायुयान उपकरण और हेलीकाप्टर जिसके अंतर्गत इसका विक्रय, पट्टे पर देना और वित्त पो-ण करना है, से संबंधित संव्यवहार ;

(v) माल का वहन ;

(vi) निविदा सहित सन्निर्माण और अवसंरचना संविदा ;

(vii) अनन्यतः व्यापार या वाणिज्य में प्रयुक्त स्थावर संपत्ति से संबंधित करार ;

(viii) उन्मुक्त करार ;

(ix) वितरण और अनुज्ञप्तिधारी करार ;

(x) प्रबंध और परामर्शदात्री करार ;

(xi) संयुक्त उद्यम करार ;

(xii) शेयरधारक करार ;

(xiii) बाह्यस्त्रोत सेवा और वित्तीय सेवा सहित सेवा उद्योग से संबंधित अभिदाय और विनिधान करार ;

(xiv) माल अभिकरण और माल प्रथा ;

(xv) भागीदारी करार ;

(xvi) तकनीकी विकास करार ;

(xvii) रजिस्ट्रीकृत और अरजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न, प्रतिलिप्यधिकार, पेटेंट, डिजाइन, अधिकार-क्षेत्र नाम, भौगोलिक निर्देशांक और सेमीकन्डक्टर समेकित सर्किट से संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकार ;

(xviii) काल विक्रय करार या सेवा का उपबंध ;

(xix) इलेक्ट्रोमैगनेटिक स्पेक्ट्रम सहित तेल या गैर आरक्षित या अन्य प्राकृतिक संसाधनों का शो-ण ;

(xx) बीमा और पुनःबीमा ;

(xxi) उपरोक्त में से किसी से संबंधित या ऐसे अन्य वाणिज्यिक विवाद से संबंधित संविदा अभिकरण जो केंद्रीय सरकार आगामी उपखंड के अनुसार विहित करे, और

(xxii) ऐसे अन्य वाणिज्यिक विवाद जो केंद्रीय सरकार विहित करे।

स्प-टीकरण 1 : कोई वाणिज्यिक विवाद मात्र इस कारण वाणिज्यिक विवाद की प्रास्थिति नहीं खो देगा क्योंकि इसमें स्थावर संपत्ति की बरामदगी या प्रतिभूति के रूप में दी गई स्थावर संपत्ति में से धन का उद्ग्रहण भी अंतवर्लित है या स्थावर संपत्ति से संबंधित कोई अन्य अनुतो-न अंतवर्लित है ।

स्प-टीकरण 2 : कोई वाणिज्यिक विवाद मात्र इस कारण वाणिज्यिक विवाद की प्रास्थिति नहीं खो देगा क्योंकि संविदा करने वाले पक्षकारों में से एक पक्षकार राज्य या उसका कोई अभिकरण या परिकरण या लोक कृत्य करने वाला कोई प्राइवेट निकाय है ।

(ख) ''वाणिज्यिक अपीली प्रभाग'' से धारा 3 की उपधारा (3) के अधीन गठित उच्च न्यायालय का वाणिज्यिक अपीली प्रभाग अभिप्रेत है ।

(ग) ''वाणिज्यिक न्यायालय'' से धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन गठित वाणिज्यिक न्यायालय अभिप्रेत हैं ।

(घ) ''वाणिज्यिक प्रभाग'' से धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन गठित उच्च न्यायालय का वाणिज्यिक प्रभाग अभिप्रेत है ।

(ङ) ''जिला न्यायाधीश'' का वही अर्थ है, जो भारत के संविधान के

अनुच्छेद 236 के खंड (क) में अंतर्वि-ट है ।

(च) ''दस्तावेज'' से शब्द, अंक या चिह्न या इलैक्ट्रानिक माध्यम से उन माध्यमों में से एक से अधिक द्वारा उस वि-नय के अभिलेखन के प्रयोजन के लिए प्रयोग किए जाने के लिए आशयित या जिसका प्रयोग किया जाए किसी पदार्थ पर व्यक्त या वर्णित कोई वि-नय अभिप्रेत है ।

(छ) ''अधिसूचना'' से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है और ''अधिसूचित'' पद का उसके सजातीय और व्याकरणिक रूप-भेदों सहित तदनुसार अर्थ लगाया जाएगा ।

(ज) ''विनिर्दि-ट मूल्य'' का वही अर्थ है जो धारा 13 में है ।

(2) उन शब्दों और पदों के जो यहां प्रयुक्त है और परिभाि-त नहीं है, किंतु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और साक्ष्य अधिनियम 1972 में परिभाि-त किए गए हैं वही अर्थ होंगे जो उस संहिता में उनके हैं ।

अध्याय 2

वाणिज्यिक प्रभाग, वाणिज्यिक अपीली प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालयों का गठन

3. वाणिज्यिक प्रभाग, वाणिज्यिक अपीली प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालयों का गठन

(1) मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता रखने वाले सभी उच्च न्यायालयों में, केंद्रीय सरकार, सुसंगत उच्च न्यायालय और सुसंगत राज्य सरकार से परामर्श के पश्चात् अधिसूचना द्वारा उस उच्च न्यायालय के ''वाणिज्यिक प्रभाग'' नामक मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता रखने वाला ऐसे उच्च न्यायालय का प्रभाग गठित करेगा । ऐसे वाणिज्यिक प्रभाग न्यायाधीशों की इतनी संख्या से मिलकर बनेगा जैसा ऐसे उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा समय-समय पर अवधारित किया जाए ।

(2) सभी राज्यों या संघ राज्यक्षेत्रों में जहां उच्च न्यायालय के पास मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता नहीं है, केंद्रीय सरकार, सुसंगत उच्च न्यायालय और सुसंगत राज्य सरकार के परामर्श के पश्चात् अधिसूचना द्वारा, ऐसे क्षेत्र के लिए अधिकारिता रखने वाले वाणिज्यिक न्यायालय का गठन कर सकेगी जैसा ऐसी अधिसूचना में उपदर्शित है । ऐसा वाणिज्यिक न्यायालय न्यायाधीशों की ऐसी संख्या से मिलकर बनेगा जैसा इस अधिनियम की धारा 5 के अनुसार नियत की जाए ।

(3) सभी राज्यों या संघ राज्यक्षेत्रों में जहां उच्च न्यायालय के पास मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता है, केंद्रीय सरकार, सुसंगत उच्च न्यायालय और सुसंगत राज्य सरकार से परामर्श के पश्चात्, अधिसूचना द्वारा, ऐसे क्षेत्र से भिन्न जिस पर उच्च न्यायालय मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करता है, अन्य ऐसे क्षेत्रों के लिए वाणिज्यिक न्यायालय गठित करेगा । ऐसा वाणिज्यिक न्यायालय न्यायाधीशों की ऐसी संख्या से मिलकर बनेगा जैसा इस अधिनियम की धारा 5 के अनुसार नियत की जाए ।

दृ-टांत - केंद्रीय सरकार मुंबई में मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता रखने वाले बम्बई उच्च न्यायालय की प्रधान पीठ में वाणिज्यिक प्रभाग गठित कर सकेगी। केंद्रीय सरकार इस उपधारा के अनुसार पुणे या नागपुर में वाणिज्यिक न्यायालय भी गठित कर सकेगी ।

(4) केंद्रीय सरकार उपरोक्त उपधारा (1), (2) या (3) के अधीन अधिसूचना जारी करने के साथ-साथ उस उच्च न्यायालय के "वाणिज्यिक अपीली प्रभाग" नामक सुसंगत उच्च न्यायालय में प्रभाग गठित करेगी । ऐसे वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के पास एक या अधिक प्रभाग न्याय पीठें होंगी जैसा ऐसे उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा समय-समय पर अवधारित की जाए ।

4. उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के

न्यायाधीशों का नामांकन

(1) धारा 3 की उपधारा (1) या उपधारा (3) के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के पश्चात्, उस उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति ऐसे उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग का न्यायाधीश होने के लिए उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की ऐसी संख्या नामंकित करेगा जितना अपेक्षित हो ।

(2) वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के लिए नामंकित होने वाले न्यायाधीशों में वाणिज्यिक मुकदमों को निपटाने की विशे-ाज्ञता और अनुभव होगा और ऐसा नामांकन अधिमानतः दो व-र्ा या ऐसी अन्य अवधि के लिए होगा जैसा सुसंगत उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा अवधारित की जाए ।

5. वाणिज्यिक न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति

(1) वाणिज्यिक न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति ऐसे नियमों के अनुसार जो उस उच्च न्यायालय द्वारा विहित की जाए, सुसंगत उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी ।

(2) जहां वाणिज्यिक न्यायालय के लिए एक से अधिक न्यायाधीश की नियुक्ति की जाती है, वरि-ठतम न्यायाधीश को "प्रधान न्यायाधीश, वाणिज्यिक न्यायालय" अभिहित किया जाएगा और वाणिज्यिक न्यायालय के संबंध में ऐसी शक्तियां और कृत्य होंगे जैसा जिला न्यायालय के प्रशासन के प्रयोजनों के लिए प्रधान जिला न्यायाधीश के पास होता है ।

(3) कोई व्यक्ति वाणिज्यिक न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किए जाने का तब तक पात्र नहीं होगा जब तक ऐसा व्यक्ति जिला न्यायाधीश नियुक्त किए जाने के लिए अर्ह नहीं है और वाणिज्यिक विवादों के निपटाने में प्रमाण्य विशे-ाता और अनुभव रखता है ।

(4) राज्य सरकार या केंद्रीय सरकार यथा लागू सुसंगत उच्च न्यायालय के परामर्श से वाणिज्यिक न्यायालय के न्यायाधीशों का वेतन, परिलब्धियां और सेवा

के अन्य निबंधनों और शर्तों को विहित करेगी ।

परंतु वाणिज्यिक न्यायालय के न्यायाधीशों की ऐसी सेवा शर्तें और निबंधन उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के प्रधान जिला न्यायाधीश या प्रधान जिला न्यायाधीश के समतुल्य न्यायिक सेवा के किसी अन्य पद से कम अनुकूल नहीं होंगी ।

6. उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभागों की अधिकारिता

मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता रखने वाले उच्च न्यायालय में विनिर्दि-ट मूल्य के फाइल किए गए वाणिज्यिक विवादों से संबंधित सभी वादों और आवेदनों की सुनवाई और निपटान उस उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा किया जाएगा ।

परंतु जिला न्यायालय से अवर न्यायालय के समक्ष न लाए जाने वाले और उच्च न्यायालय की मूल शाखा में फाइल किए गए कानून द्वारा अनुबंधित वाणिज्यिक विवादों से संबंधित सभी वादों और आवेदनों की सुनवाई और निपटान उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग द्वारा किया जाएगा ।

परंतु यह और कि डिजाइन अधिनियम, 2000 की धारा 22(4) या पेटेंट अधिनियम, 1970 की धारा 104 के आधार पर उच्च न्यायालय को अंतरित सभी वादों और आवेदनों की सुनवाई और निपटान उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग ऐसे सभी क्षेत्रों में जिस पर उच्च न्यायालय मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करता है, द्वारा की जाएगी ।

7. वाणिज्यिक न्यायालयों की अधिकारिता

वाणिज्यिक न्यायालय को उस क्षेत्र जिस पर उसे धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन अधिसूचना के आधार राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता निहित की गई है, से उद्भूत विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित सभी वादों और आवेदनों का विचारण करने की अधिकारिता होगी ।

स्प-टीकरण : वाणिज्यिक विवाद उस क्षेत्र से उद्भूत समझा जाएगा जिस पर

वाणिज्यिक न्यायालय को अधिकारिता निहित की गई है यदि ऐसे वाणिज्यिक विवाद से संबंधित वाद या आवेदन सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 16 से 20 के अनुसार संस्थित किया गया है ।

8. उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग की अधिकारिता

(1) प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग के किसी आदेश या डिक्री के विरुद्ध की गई किसी अपील की सुनवाई और विनिश्चय उस उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी ।

(2) प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वाणिज्यिक न्यायालय के किसी आदेश या डिक्री के विरुद्ध की गई किसी अपील की सुनवाई और निपटान ऐसे वाणिज्यिक न्यायालय पर पर्यवेक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी ।

9. अंतवर्ती आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन या याचिका का वर्णन

किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, कोई सिविल पुनरीक्षण आवेदन या याचिका अधिकारिता के विवाद्यक पर आदेश सहित वाणिज्यिक न्यायालय के किसी अंतवर्ती आदेश के विरुद्ध ग्रहण नहीं किया जाएगा और धारा 13 के उपबंध के अधीन रहते हुए ऐसी कोई चुनौती वाणिज्यिक न्यायालय की डिक्री के विरुद्ध अपील में ही उठाई जाएगी ।

10. वाद का अंतरण यदि वाणिज्यिक विवाद का प्रतिदावा विनिर्दि-ट मूल्य का है

(1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में अंतर्वि-ट किसी बात के होते हुए भी, इस दशा में कि वाणिज्यिक न्यायालय से संबंधित सिविल न्यायालय के समक्ष वाद में फाइल प्रतिदावा विनिर्दि-ट मूल्य का है तो ऐसा वाद सिविल न्यायालय द्वारा ऐसे वाद पर राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता रखने वाले वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक

न्यायालय (यथास्थिति) को अंतरित किया जाएगा ।

(2) इस दशा में कि ऐसा वाद उपधारा (1) में अनुध्यात रीति में अंतरित नहीं होता है, प्रश्नगत सिविल न्यायालय पर पर्यवेक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग करने वाला उच्च न्यायालय का वाणिज्यिक अपीली प्रभाग वाद के किसी पक्षकार के आवेदन पर सिविल न्यायालय के समक्ष लंबित ऐसे वाद को प्रत्याहृत कर सकेगा और ऐसे वाद पर राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता रखने वाला वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय (यथास्थिति) विचारण या निपटान के लिए इसका अंतरण कर सकेगा और अंतरण का ऐसा आदेश अंतिम और आबद्धकर होगा ।

11. माध्यस्थम् वि-नयों की बावत अधिकारिता

जहां माध्यस्थम् की वि-नय-वस्तु विनिर्दि-ट मूल्य का वाणिज्यिक विवाद है और :

(1) यदि ऐसा माध्यस्थम् अंतरा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् है, तो माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन ऐसे माध्यस्थम् से उद्भूत सभी आवेदन या अपीलें, जो उच्च न्यायालय में फाइल की गई है, की सुनवाई और निपटान ऐसे वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी जहां वाणिज्यिक अपीली प्रभाग ऐसे उच्च न्यायालय में गठित किया गया है ।

(2) यदि ऐसा माध्यस्थम् अंतररा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् से भिन्न है तो माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन ऐसे माध्यस्थम् से उद्भूत सभी आवेदन या अपीलें जो उच्च न्यायालय की मूल शाखा में फाइल किए गए हैं, की सुनवाई और निपटान ऐसे वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी जहां ऐसा वाणिज्यिक अपीली प्रभाग ऐसे उच्च में गठित किया गया है ।

(3) यदि ऐसा माध्यस्थम अंतररा-ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् से भिन्न है तो माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन ऐसे माध्यस्थम् से उद्भूत सभी आवेदन या अपीलें, जो जिले की मूल अधिकारिता (जो उच्च

नहीं है) के किसी प्रधान सिविल न्यायालय के समक्ष साधारणतः लाया जाता, ऐसे माध्यस्थम पर राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता का प्रयोग करने वाले वाणिज्यिक न्यायालय में फाइल की जाएगी और उनकी सुनवाई और निपटान इस न्यायालय द्वारा किया जाएगा जहां ऐसा वाणिज्यिक न्यायालय गठित किया गया है ।

12. वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन

इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय, ऐसे किसी वाणिज्यिक विवाद जिसकी बावत सिविल न्यायालय की अधिकारिता तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन व्यक्ततः या विविक्षितः वर्जित है, से संबंधित किसी वाद, आवेदन या कार्यवाहियों का ग्रहण या विनिश्चय नहीं करेगा ।

अध्याय 3

विनिर्दि-ट मूल्य की परिभा-ा और अवधारण

(1) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए किसी वाणिज्यिक विवाद से संबंधित, "विनिर्दि-ट मूल्य" से किसी वाद की वि-ाय-वस्तु का ऐसा मूल्य अभिप्रेत है, जो एक करोड़ रुपए से कम नहीं है या ऐसे उच्चतर मूल्य का है, जिसे केंद्रीय सरकार समय-समय पर अधिसूचना द्वारा विहित करे ।

(2) किसी वाद या अपील या आवेदन में वाणिज्यिक विवाद की वि-ाय-वस्तु के विनिर्दि-ट मूल्य का अवधारण निम्नलिखित रीति में किया जाएगा :--

(क) जहां किसी वाद या आवेदन में मांगा गया अनुतो-ा धन की वसूली के लिए है, वहां वाद या आवेदन फाइल करने की तारीख तक संगणित ब्याज, यदि कोई हो, सहित वाद या अपील या आवेदन में वसूली किए जाने के लिए चाहे गए धन को ऐसे विनिर्दि-ट मूल्य का अवधारण करने के लिए हिसाब में लिया जाएगा ;

(ख) जहां किसी वाद, अपील या आवेदन में मांगा गया अनुतो-न जंगम संपत्ति या उसमें किसी अधिकार से संबंधित है, वहां वाद, अपील या आवेदन फाइल करने की तारीख को जंगम संपत्ति के बाजार मूल्य को ऐसे विनिर्दि-ट मूल्य का अवधारण करने के लिए हिसाब में लिया जाएगा ;

(ग) जहां किसी वाद, अपील या आवेदन में मांगा गया अनुतो-न स्थावर संपत्ति या उसमें किसी अधिकार से संबंधित है, वहां, यथास्थिति, वाद, अपील या आवेदन फाइल करने की तारीख को स्थावर संपत्ति के बाजार मूल्य को ऐसे विनिर्दि-ट मूल्य का अवधारण करने के लिए हिसाब में लिया जाएगा ;

(घ) जहां किसी वाद, अपील या आवेदन में मांगा गया अनुतो-न किसी अन्य अमूर्त अधिकार से संबंधित है, वहां वादी द्वारा उक्त अधिकारों के यथा अनुमानित बाजार मूल्य को ऐसे विनिर्दि-ट मूल्य का अवधारण करने के लिए हिसाब में लिया जाएगा ;

(ङ) जहां किसी वाद, अपील या आवेदन में प्रतिदावा किया गया है, वहां प्रतिदावे की तारीख को ऐसे प्रतिदावे में वाणिज्यिक विवाद की वि-नय-वस्तु के मूल्य को हिसाब में लिया जाएगा ।

(3) किसी वाणिज्यिक विवाद के माध्यस्थम् में दावे और प्रति-दावे, यदि कोई है, के कथन में यथा उपवर्णित दावे और प्रति-दावे, यदि कोई है का सकल मूल्य यह अवधारित करने का आधार होगा कि क्या ऐसा माध्यस्थम् यथास्थिति वाणिज्यिक प्रभाग, वाणिज्यिक अपीली प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय की अधिकारिता के अधीन है ।

(4) यथास्थिति सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन कोई अपील या सिविल पुनरीक्षण आवेदन वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के नि-क-र्ा के आदेश से नहीं किया जाएगा कि उसे इस अधिनियम के अधीन वाणिज्यिक विवाद सुनने की अधिकारिता है ।

अध्याय 4

अपीलें

14. वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक न्यायालयों के आदेशों से अपीलें

(1) वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय द्वारा पारित ऐसे आदेशों से ही अपील की जाएगी जो इस अधिनियम द्वारा यथासंशोधित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43 और माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 के अधीन विनिर्दि-टतः उपवर्णित है और किसी अन्य आदेश से नहीं ।

(2) किसी विधि या उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेंट में अंतर्वि-ट किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के उपबंधों से भिन्न वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के किसी आदेश या डिक्री से कोई अपील नहीं की जाएगी ।

15. वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक न्यायालयों की डिक्रियों से अपीलें

वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय की प्रत्येक डिक्री जिसके अंतर्गत किसी दावे का निर्णय सम्मिलित है, के विरुद्ध अधिकारितागत उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग को अपील की जाएगी ।

16. अधिकरणों की दशा में अपीलें या रिट याचिकाएं

निम्नलिखित अधिकरणों के आदेशों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में फाइल, अपील या रिट याचिका की सुनवाई और निपटान ऐसे उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा की जाएगी यदि ऐसी अपील या रिट याचिका की वि-नय-वस्तु वाणिज्यिक विवाद से संबंधित है :--

(क) प्रतिस्पर्धा अपील अधिकरण ;

(ख) ऋण वसूली अपील अधिकरण ;

(ग) बौद्धिक संपत्ति अपील बोर्ड ;

(घ) कंपनी विधि बोर्ड या रा-ट्रीय कंपनी विधि बोर्ड ;

(ङ) प्रतिभूति अपील अधिकरण ;

(च) दूरसंचार विवाद समाधान और अपील अधिकरण ।

17. अपीलों का शीघ्र निपटान

वाणिज्यिक अपीली प्रभाग, यथास्थिति, ऐसी अपील या रिट याचिका के फाइल करने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर अपील या रिट याचिका को निपटाने का प्रयास करेगा ।

अध्याय 5

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों का संशोधन

18. वाणिज्यिक विवादों को लागू होने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के संशोधन

(1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों को विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद की बावत किसी वाद में उनके लागू होने को, इस अधिनियम की अनुसूची में उपवर्णित रीति से संशोधित माना जाए ।

(2) वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक न्यायालय विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद की बावत वाद के विचारण में इस अधिनियम की अनुसूची द्वारा यथासंशोधित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों का पालन करेंगे ।

(3) जहां अधिकारितागत उच्च न्यायालय के किसी नियम का कोई उपबंध या राज्य सरकार द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का कोई संशोधन इस अधिनियम की अनुसूची द्वारा यथासंशोधित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों के प्रतिकूल है, वहां इस अधिनियम की अनुसूची द्वारा यथासंशोधित सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंध अभिभावी होंगे ।

अध्याय 6

प्रकीर्ण

19. लंबित मामलों का अंतरण

(1) ऐसे उच्च न्यायालय जहां वाणिज्यिक प्रभाग संस्थित किया गया है, में लंबित विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन आवेदनों सहित सभी वाद और आवेदन वाणिज्यिक प्रभाग को अंतरित हो जाएंगे ।

(2) ऐसे जिला या क्षेत्र जिसकी बावत वाणिज्यिक न्यायालय गठित किया गया है, के किसी सिविल न्यायालय में लंबित विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवाद से संबंधित माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन आवेदनों सहित सभी वाद और आवेदन ऐसे वाणिज्यिक न्यायालय को अंतरित हो जाएंगे ।

परंतु कोई वाद या आवेदन उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन अंतरित नहीं होगा जहां वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के गठन के पूर्व न्यायालय द्वारा अंतिम निर्णय आरक्षित कर लिया गया है ।

(3) जहां विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक वाद से संबंधित माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन आवेदन सहित कोई वाद या आवेदन उपरोक्त उपधारा (1) या (2) के अधीन वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय को अंतरित हो गया है वहां इस अधिनियम के भाग 2 के उपबंध केवल उन प्रक्रियाओं को लागू होंगे जो अंतरण के समय पूरे नहीं हुए थे ।

(4) वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय, यथास्थिति, नई समयबद्धता विहित करने के लिए ऐसे अंतरिम वाद या आवेदन की बावत मामला प्रबंध सुनवाई कर सकेंगे और/या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (इस अधिनियम के भाग 2 द्वारा यथा संशोधित) के आदेश 14-क के अनुसार ऐसे वाद या आवेदन के शीघ्र और प्रभावी निपटान के लिए ऐसे और निदेश जारी कर सकेंगे जो आवश्यक हो ।

परंतु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (इस अधिनियम के भाग 2 द्वारा यथा संशोधित) के आदेश 5 के नियम 1 के उपनियम (1) का परंतुक ऐसे अंतरित वादों या आवेदनों को लागू नहीं होगा और न्यायालय, स्वविवेकानुसार ऐसी नई समयावधि विहित कर सकेगा जिसके भीतर लिखित कथन अवश्य फाइल किया जाए ।

(5) ऐसी दशा में कि ऐसा वाद या आवेदन उपधारा (1), (2) और (3) में अनुध्यात रीति में अंतरित नहीं किया गया है, उच्च न्यायालय का अधिकारितागत वाणिज्यिक अपीली प्रभाग, वाद के किसी पक्षकार के आवेदन पर ऐसे न्यायालय से ऐसा वाद या आवेदन वापस ले सकेगा जिसके समक्ष यह लंबित है और ऐसे वाद पर राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता रखने वाले वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय (यथास्थिति) के विचारण या निपटान के लिए इसे अंतरित कर सकेगा और अंतरण का ऐसा आदेश अंतिम और आबद्धकर होगा ।

20. अवसंरचनात्मक सुविधाएं

उच्च न्यायालय के यथास्थिति, वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय को उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुमोदित ई-न्यायालय परियोजना के फेज 2 के अधीन सुविधा सहित अपेक्षित भौतिक और अंकीय अवसंरचना उपलब्ध कराई जाएगी ।

21. प्रशिक्षण और सतत शिक्षा

रा-ट्रीय न्यायिक अकादमी और राज्य न्यायिक अकादमियां, यथास्थिति, वाणिज्यिक न्यायालय, उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के न्यायाधीशों के प्रशिक्षण और सतत शिक्षा के लिए आवश्यक सुविधाएं सृजित करेंगी ।

22. वाणिज्यिक न्यायालयों, वाणिज्यिक प्रभागों और वाणिज्यिक अपीली प्रभागों द्वारा आंकड़ों का संग्रहण और प्रकटन

यथास्थिति, वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग के समक्ष फाइल वादों, आवेदनों, अपीलों या रिट याचिकाओं की संख्या, ऐसे मामलों की विचाराधीनता, प्रत्येक मामले की प्रास्थिति और निपटाए गए मामलों की संख्या से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़े प्रत्येक वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग और वाणिज्यिक अपीली प्रभाग द्वारा अनुरक्षित और लगातार नवीनतम किए जाएंगे और प्रत्येक मास सुसंगत उच्च न्यायालय की बेवाइट पर प्रकाशित किए जाएंगे ।

23. प्रैक्टिस निदेश जारी करने की उच्च न्यायालय की शक्ति

उच्च न्यायालय, अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के अध्याय 2 या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों के अनुपूरक के लिए प्रैक्टिस निदेश जारी कर सकेगा जहां तक ऐसे उपबंध विनिर्दि-ट मूल्य के वाणिज्यिक विवादों की सुनवाई को लागू होते हैं ।

24. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होना

अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस अधिनियम के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में या इस अधिनियम से भिन्न किसी विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाले किसी लिखत में अंतर्वि-ट असंगत किसी बात के होते हुए, प्रभावी होंगे ।

25. कठिनाइयों का दूर किया जाना

(1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केंद्रीय सरकार राजपत्र में प्रकाशित ऐसे आदेश द्वारा, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हो, जो उस कठिनाई को दूर करने के लिए उसे आवश्यक या समीचीन प्रतीत हो, उस कठिनाई को दूर कर सकेगी ;

परंतु इस धारा के अधीन कोई आदेश इस अधिनियम के प्रारंभ से दो व-र् की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात्

यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

अनुसूची

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के संशोधन

1. धारा 26 का संशोधन - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 26 में उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित परंतुक अंतःस्थापित किया जाए :

"परंतु ऐसा शपथपत्र आदेश 6 नियम 19क के अधीन विहित प्ररूप और रीति में होगा ।"

2. धारा 35 का संशोधन - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 35 का लोप किया जाए और उसके स्थान पर निम्नलिखित धारा प्रतिस्थापित की जाए :

धारा 35 - खर्चा

(1) किसी वाणिज्यिक विवाद के संबंध में, न्यायालय को किसी अन्य विधि या नियम में किसी बात के होते हुए भी, यह अवधारित करने का विवेकाधिकार है :

(क) क्या खर्चा एक पक्षकार से एक अन्य पक्षकार को संदेय है ;

(ख) उन खर्चों की मात्रा ; और

(ग) उन्हें कब संदत्त करना है ।

स्प-टीकरण - उपरोक्त खंड (क) के प्रयोजन के लिए, 'खर्चा' से निम्नलिखित से संबंधित युक्तियुक्त खर्चा अभिप्रेत है -

(i) उपगत साक्षियों की फीस और व्यय ;

(ii) उपगत विधिक फीस और व्यय ;

(iii) कार्यवाहियों के संबंध में उपगत कोई अन्य व्यय ।

(2) यदि न्यायालय खर्चे के संदाय के लिए आदेश करने का विनिश्चय करता है तो सामान्य नियम यह है कि असफल पक्षकार द्वारा सफल पक्षकार को खर्चे का

संदाय करने का आदेश दिया जाएगा :

परंतु न्यायालय लेखबद्ध अभिलिखित कारणों से सामान्य नियम से विपथित करने वाला आदेश कर सकेगा ।

दृ-टांत : वादी अपने वाद में संविदा के भंग और नुकसानी के लिए धन डिक्री की ईप्सा करता है । न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि वादी धन डिक्री का हकदार है । तथापि, वह नि-क-र्ा को उलटता है कि नुकसानियों का दावा निरर्थक और खिजाऊ है ।

ऐसी परिस्थितियों में, नुकसानियों के निरर्थक दावे करने के लिए वादी सफल पक्षकार होने के बावजूद वादी पर खर्चा अधिरोपित कर सकेगा ।

(3) खर्चे का संदाय करने के लिए आदेश करते समय, न्यायालय को निम्नलिखित परिस्थितियों पर ध्यान देगा :

(क) पक्षकारों का आचरण ;

(ख) क्या पक्षकार अपने मामले के किसी भाग पर सफल रहा है, चाहे वह पक्षकार पूर्णतः सफल नहीं रहा है ;

(ग) क्या पक्षकार ने निरर्थक प्रतिदावा किया था जिससे मामले के निपटान में विलंब हो ;

(घ) क्या पक्षकार द्वारा सुलझाने के लिए कोई युक्तियुक्त प्रस्ताव किया गया और दूसरे पक्षकार द्वारा युक्तियुक्त प्रस्ताव किया गया और दूसरे पक्षकार द्वारा अयुक्तियुक्ततः इनकार किया गया है ;

(ङ) क्या पक्षकार ने न्यायालय का समय न-ट करने के लिए निरर्थक दावा और किया था और खिजाऊ कार्यवाहियां संस्थित की थीं ।

(4) ऐसे आदेश जो न्यायालय इस उपबंध के अधीन कर सकते हैं, के अंतर्गत ऐसा आदेश है जिसे पक्षकार को संदाय ही करना होगा :

(क) दूसरे पक्षकार के खर्चे का अनुपात ;

(ख) दूसरे पक्षकार के खर्चे की बावत कथित रकम ;

(ग) कतिपय तारीख या कालावधि तक के लिए ही खर्चा ;

(घ) कार्यवाहियां आरंभ होने के पूर्व उपगत खर्चा ;

(ङ) कार्यवाहियों में लिए गए विशि-ट कदमों से संबंधित खर्चे ;

(च) कार्यवाहियों के सुभिन्न भाग के लिए ही खर्चे ; और

(छ) कतिपय तारीख से या तक खर्चे पर ब्याज ।

3. **धारा 35क का संशोधन** - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 35क की उपधारा (2) का लोप किया जाएगा ।

4. आदेश 5 का संशोधन - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची के आदेश 5 नियम 1 के उपनियम (1) के दूसरे परंतुक के स्थान पर निम्नलिखित परंतुक रखा जाएगा :

"परंतु यह और कि जहां प्रतिवादी तीस दिनों की अवधि के भीतर सिविल कथन फाइल करने में असफल रहता है, वहां उसे न्यायालय द्वारा लेखबद्ध रूप में अभिलिखित कारणों और ऐसे खर्चे के संदाय पर जो न्यायालय ठीक समझे, ऐसे अन्य दिन लिखित कथन फाइल करने की अनुज्ञा दी जाएगी किंतु जो समन की तामीली की तारीख से एक सौ बीस दिन के पश्चात् नहीं होगा । समन की तामीली की तारीख से एक सौ बीस दिन की समाप्ति पर, प्रतिवादी लिखित कथन फाइल करने का अधिकार खो देगा और न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने की अनुज्ञा नहीं देगा ।"

5. आदेश 6 का संशोधन : सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची के आदेश 6 में, --

(i) नियम 3 के पश्चात्, निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा :

"3क. वाणिज्यिक न्यायालयों में अभिवचन का प्ररूप — ऐसे वाणिज्यिक विवादों में, जहां अभिवचनों के प्ररूप ऐसे वाणिज्यिक विवादों के प्रयोजनों के लिए बनाए गए उच्च न्यायालय या प्रैक्टिस निदेशों के अधीन विहित किए गए हैं, अभिवचन ऐसे प्ररूप में होंगे ।"

(ii) नियम 15 के पश्चात्, निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा :

"15क. वाणिज्यिक विवादों में अभिवचनों का सत्यापन — (1) नियम 15 में किसी बात के होते हुए भी वाणिज्यिक विवादों के सभी अभिवचनों का सत्यापन इस अनुसूची के उपाबंध में विहित रीति और प्ररूप में शपथपत्र द्वारा किया जाएगा ।

(2) उपरोक्त उपनियम (1) के अधीन शपथपत्र पर कार्यवाहियों के पक्षकार या पक्षकारों में से एक या ऐसे पक्षकार या पक्षकारों की ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा जो मामले के तथ्यों से परिचित होने के रूप में न्यायालय का समाधान करता है और जो ऐसे पक्षकार या पक्षकारों द्वारा सम्यक् रूप से प्राधिकृत है ।

(3) जहां अभिवचन को संशोधित किया जाता है वहां संशोधनों को उपनियम (1) में निर्दि-ट प्ररूप और रीति में सत्यापित होना चाहिए जब तक न्यायालय अन्यथा आदेश नहीं देता ।

(4) जहां अभिवचन को उपनियम (1) के अधीन उपबंधित रीति में सत्यापित नहीं किया जाता है, वहां पक्षकार को ऐसे अभिवचन या उसमें वर्णित किसी वि-नय को साक्ष्य के रूप में अवलंबित करने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी ।

(5) न्यायालय ऐसे अभिवचन को हटा सकेगा जो इस अनुसूची के उपाबंध में उपवर्णित शपथपत्र के अनुसार सत्यता के कथन से सत्यापित नहीं हैं ।

6. आदेश 7 का संशोधन -- सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की पहली अनुसूची के आदेश 7 के नियम 2 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा :

"2क. जहां वाद में ब्याज की ईप्सा की गई है, वहां वादपत्र में उपनियम (2) और (3) के अधीन उपवर्णित ब्यौरे के साथ उस आशय का कथन होगा ।

(2) जहां वादी ब्याज चाहता है, वादपत्र में यह उल्लेख होगा कि क्या वादी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 34 के अर्थान्तर्गत वाणिज्यिक संव्यवहार के संबंध में ब्याज की ईप्सा कर रहा है और इसके अतिरिक्त, यदि वादी संविदा के निबंधनों के अधीन ; या ऐसी अधिनियमिति के अधीन जिसे वादपत्र में अधिनियमिति को विनिर्दि-ट करना है तो उसे यह उल्लेख करना होगा कि किस आधार पर वह ऐसा कर रहा है ।

(3) अभिवचनों में भी यह उल्लेख होगा कि किस दर पर ब्याज का दावा किया गया है ; वह तारीख जिससे यह दावा किया गया है ; वह तारीख जिससे यह संगणित किया गया है, संगणना की तारीख को दावाकृत ब्याज की कुल रकम ; और दैनिक दर जिस पर ब्याज उस तारीख के पश्चात् प्रोद्भूत होता है ।

7. आदेश 8 का संशोधन : सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची के आदेश 8 में,

(i) नियम 1 के विद्यमान परंतुक के स्थान पर निम्नलिखित परंतुक रखा जाएगा :

"परंतु यह और कि जहां प्रतिवादी तीस दिनों की अवधि के भीतर सिविल कथन फाइल करने में असफल रहता है, वहां उसे न्यायालय द्वारा लेखबद्ध रूप में अभिलिखित कारणों और ऐसे खर्चे के संदाय पर जो न्यायालय ठीक समझे, ऐसे अन्य दिन लिखित कथन फाइल करने की

अनुज्ञा दी जाएगी किंतु जो समन की तामीली की तारीख से एक सौ बीस दिन के पश्चात् नहीं होगा । समन की तामीली की तारीख से एक सौ बीस दिन की समाप्ति पर, प्रतिवादी लिखित कथन फाइल करने का अधिकार खो देगा और न्यायालय लिखित कथन अभिलेख पर लेने की अनुज्ञा नहीं देगा ।"

(ii) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा :

"3क. उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के समक्ष वादों में प्रतिवादी द्वारा प्रत्याख्यान

(1) प्रत्याख्यान इस नियम के उपनियम (2), (3), (4) और (5) में उपबंधित रीति से होगा ।

(2) प्रतिवादी अपने लिखित कथन में यह उल्लेख करेगा कि वादपत्र की विशि-टियों में किन अभिकथनों का वह प्रत्याख्यान करता है ; किस अभिकथन को वह स्वीकार करने या प्रत्याख्यान करने में असमर्थ है किंतु किसे वह वादी से साबित करने की अपेक्षा करता है ; और किन अभिकथनों को वह स्वीकार करता है ।

(3) जहां प्रतिवादी वादपत्र में तथ्य के अभिकथन का प्रत्याख्यान करता है तो उसे ऐसा करने का अपना कारण बताना होगा और यदि वह वादी द्वारा दिए गए कथन से भिन्न घटनाओं का बयान अग्रे-नित करना चाहता है तो अपने निजी बयान का उल्लेख करना चाहिए ।

(4) यदि प्रतिवादी न्यायालय की अधिकारिता को विवादित करता है तो उसे ऐसा करने के कारणों का उल्लेख करना चाहिए ; और यदि वह सक्षम है तो वाद के मूल्य का अपना निजी कथन करेगा ।

(iii) नियम 5(1) में, प्रथम परंतुक के पश्चात्, निम्नलिखित परंतुक अंतःस्थापित किया जाएगा :

"परंतु यह और कि वादपत्र के तथ्य के प्रत्येक अभिकथन को, यदि इस आदेश के नियम 3क के अधीन उपबंधित रीति में प्रत्याख्यान नहीं किया जाता है तो निर्योग्यता के अधीन व्यक्ति के सिवाय स्वीकार किया गया माना जाएगा ।"

(iv) नियम 10 में, प्रथम परंतुक के पश्चात् निम्नलिखित परंतुक अतःस्थापित किया जाएगा :

"परंतु कोई न्यायालय लिखित कथन फाइल करने के इस आदेश के नियम 1 के अधीन उपबंधित समय को बढ़ाने के लिए आदेश नहीं करेगा ।"

8. आदेश 11 का प्रतिस्थापन -- सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची के आदेश 11 को निम्नलिखित द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा --

आदेश 11

उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक न्यायालय के समक्ष वादों में दस्तावेजों का प्रकटन, अन्वे-ण और निरीक्षण

1. दस्तावेजों का प्रकटन और अन्वे-ण

(1) वादी वादपत्र के साथ निम्नलिखित सहित वाद वि-नयक अपनी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों की सूची और सभी दस्तावेजों की फोटोप्रतियां फाइल करेगा ;

(क) वादपत्र में वादी द्वारा निर्दि-ट और अवलंबित दस्तावेज ;

(ख) वादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में इसका ध्यान किए बिना कि यह वादी के मामले के समर्थन में है या प्रतिकूल है, वादपत्र के फाइल करने की तारीख को कार्यवाहियों में प्रश्नगत किसी वि-नय से संबंधित दस्तावेज ;

(ग) इस नियम की कोई बात वादियों द्वारा पेश किए गए दस्तावेजों को लागू नहीं होगी ।

(i) और प्रतिवादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए ही सुसंगत, या

(ii) वादपत्र फाइल करने के पश्चात् प्रतिवादी द्वारा प्रारंभ किए गए किसी मामले के उत्तर में, या

(iii) साक्षी को मात्र उसकी याददाश्त ताजा करने के लिए सौंपे जाने हेतु है ।

(2) वादपत्र के साथ फाइल दस्तावेजों की सूची यह विनिर्दि-ट करेगी कि क्या वादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के दस्तावेज मूल, कार्यालय प्रति या फोटोप्रतियां है । सूची में प्रत्येक दस्तावेज के पक्षकारों के ब्यौरे, नि-पादन की रीति, निर्गत या प्राप्ति और प्रत्येक दस्तावेज के अभिरक्षा के स्वरूप का भी उपवर्णन करना होगा ;

(3) वादपत्र में वादी से शपथपत्र यह घो-णा अंतर्वि-ट होगी कि वादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों को जो उसके द्वारा आरंभ की गई कार्यवाहियों के तथ्यों और परिस्थितियों से संबंधित है, को प्रकट किया गया है और उसकी प्रतियां वादपत्र के समय उपाबद्ध हैं और वादी के पास उसकी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में कोई अन्य दस्तावेज नहीं है ।

स्प-टीकरण : इस उपनियम के अधीन शपथपत्र पर घो-णा परिशि-ट में यथा उपवर्णित सत्य के कथन में अंतर्वि-ट होगी ।

(4) अत्यावश्यक फाइलिंग की दशा में, वादी शपथ पर उक्त घो-णा के भाग के रूप में अतिरिक्त दस्तावेजों पर भरोसा करने की इजाजत मांग सकेगा और न्यायालय द्वारा ऐसी इजाजत की मंजूरी के अधीन रहते हुए, वादी, शपथ

पर इस घो-णा के साथ, कि वादी ने स्वयं द्वारा आरंभ की गई कार्यवाहियों के तथ्यों और परिस्थितियों से संबंधित अपनी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों को पेश कर दिया है और वादी के पास उसकी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में कोई अन्य दस्तावेज नहीं है, वाद फाइल करने के तीस दिनों के भीतर न्यायालय में ऐसा अतिरिक्त दस्तावेज फाइल करेगा ।

(5) वादी को ऐसे दस्तावेजों का अवलंब लेने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी जो वादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में थे और वादपत्र में प्रकट नहीं की गई थी या न्यायालय के इजाजत के सिवाय उपरोक्त उपवर्णित विस्तारित अवधि के भीतर है । ऐसी इजाजत वादपत्र के साथ अप्रकटन के लिए युक्तियुक्त हेतुक के वादी द्वारा स्थापित करने पर ही दी जाएगी ।

(6) वादपत्र में ऐसे दस्तावेजों के ब्यौरे उपवर्णित होंगे जिसे वादी प्रतिवादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में होने का विश्वास करता है और जिसे वादी अवलंब लेने की इच्छा करता है और उक्त प्रतिवादी द्वारा उसे पेश करने की इजाजत की ईप्सा करता है ;

(7) प्रतिवादी लिखित कथन या अपने प्रति दावे, यदि कोई है, के साथ वाद से संबंधित अपनी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों की सूची और सभी दस्तावेजों की फोटोप्रतियां फाइल करेगा ;

(क) लिखित कथन में प्रतिवादी द्वारा निर्दि-ट या अवलंबित दस्तावेज;

(ख) प्रतिवादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में कार्यवाही में प्रश्नगत किसी वि-नय से संबंधित दस्तावेज, इस पर ध्यान दिए बिना कि क्या यह प्रतिवादी के बचाव के समर्थन में है या प्रतिकूल है ;

(ग) इस नियम की कोई बात प्रतिवादियों द्वारा पेश किए गए दस्तावेजों को निम्नलिखित के संबंध में लागू नहीं होगी :

(i) और वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए ही सुसंगत, या

(ii) वादपत्र के फाइल करने के पश्चात् वादी द्वारा लाए गए किसी मामले के उत्तर में ; या

(iii) मात्र अपनी याददाश्त ताजा करने के लिए साक्षी को सौंपे जाने ।

(8) लिखित कथन या प्रतिदावे के साथ फाइल किए गए दस्तावेजों की सूची में यह विनिर्दि-ट होगा कि क्या प्रतिवादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के दस्तावेज मूल, कार्यालय प्रति या फोटोप्रतियां हैं । सूची में प्रतिवादी द्वारा पेश किए प्रत्येक दस्तावेज के संबंध में पक्षकारों के ब्यौरे, नि-पादन की रीति, निर्गत या पावती और प्रत्येक दस्तावेज के अभिरक्षा का प्रकार संक्षेप में उपवर्णित होगा ।

(9) लिखित कथन या प्रतिदावे में अभिसाक्षी द्वारा किए गए शपथ पर घो-णा यह अंतर्वि-ट होगी कि वादी और/या प्रतिदावे उसके द्वारा आरंभ की गई कार्यवाही के तथ्यों और परिस्थितियों की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों को प्रकट किया गया है और उसकी प्रतियां लिखित कथन या प्रतिदावे के साथ उपाबद्ध है और यह कि प्रतिवादी के पास उसकी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में कोई और दस्तावेज नहीं है ।

(10) उपरोक्त उपनियम 7(ग)(iii) के सिवाय, प्रतिवादी को ऐसे दस्तावेजों का न्यायालय की इजाजत के सिवाय अवलंब लेने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी जो प्रतिवादी की शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में थे और लिखित कथन या प्रतिदावे में प्रकट नहीं किए गए थे । ऐसी इजाजत लिखित कथन या प्रतिदावे के साथ अप्रकटन के लिए प्रतिवादी द्वारा युक्तियुक्त हेतुक सिद्ध करने पर ही मंजूर की जाएगी ।

(11) लिखित कथन या प्रतिदावे में वादी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या

अभिरक्षा में दस्तावेजों के ब्यौरे उपवर्णित होंगे जिसका प्रतिवादी अवलंब लेना चाहता है और जिसे वादपत्र में प्रकट नहीं किया गया है और वादी से इसे पेश करने के लिए कहा गया है ।

(12) ऐसे दस्तावेज जो किसी पक्षकार की जानकारी में आते हैं, को प्रकट करने का कर्तव्य वाद के निपटान तक बना रहेगा ।

2. प्रश्नमालाओं द्वारा अन्वे-ण

(1) किसी वाद में वादी या प्रतिवादी न्यायालय की इजाजत से विपक्षी पक्षकार या ऐसे पक्षकारों में से किसी एक या अधिक की परीक्षा के लिए लिखित रूप से प्रश्नमालाएं प्रदान कर सकेगा और ऐसी परिदत्त की गई प्रश्नमालाओं में यह उल्लेख करते हुए उनके वाद पर एक टिप्पण होगा कि ऐसी प्रश्नमालाओं में से किस प्रश्न का ऐसे प्रत्येक व्यक्ति से उत्तर देने की अपेक्षा है :

परंतु कोई पक्षकार उस प्रयोजन के लिए आदेश के बिना उसी पक्षकार से प्रश्नमालाओं के एक सेट से अधिक का परिदान नहीं करेगा ;

परंतु यह भी कि ऐसी प्रश्नमालाएं जिनका वाद में प्रश्नगत किसी वि-नय से कोई संबंध नहीं है, इस बात के होते हुए भी कि वे किसी साक्षी के मौखिक प्रतिपरीक्षा में ग्राह्य हो सकती हैं, असंगत समझी जाएंगी ।

(2) प्रश्नमालाएं देने के इजाजत के आवेदन पर दिए जाने के लिए प्रस्तावित विशि-ट प्रश्नमालाओं को न्यायालय में प्रस्तुत किया जाएगा और उक्त आवेदन के फाइल करने के दिन से सात दिनों के भीतर वह न्यायालय विनिश्चित करेगा, और ऐसे आवेदन के विनिश्चय पर न्यायालय किसी प्रस्थापना पर ध्यान देगा जिसे पक्षकार द्वारा विशि-टियां देने या स्वीकृतियां करने या प्रश्नगत वि-नय या उनमें से किसी से संबंधित दस्तावेज पेश करने के लिए प्रश्न किए जाने की ईप्सा की जा सकेगी और प्रस्तुत प्रश्नमालाओं में से

केवल ऐसे की ही इजाजत दी जाएगी जिसे न्यायालय वाद के नि-पक्ष निपटान के लिए या खर्चा बचाने के लिए आवश्यक समझे ।

(3) वाद के खर्चों के समायोजन में ऐसे प्रश्नमालाओं के प्रदर्शन करने के औचित्य पर किसी पक्षकार के अनुरोध पर जांच की जाएगी और यदि जांच के लिए आवेदन करने या उसके बिना, प्रभारी अधिकारी या न्यायालय की यह राय है कि ऐसी प्रश्नमालाओं का अयुक्तियुक्त रूप से, खिजाऊ या अनुचित विस्तार प्रदर्शन किया गया है तो उक्त प्रश्नमालाओं और उसके उत्तर द्वारा हुआ खर्चा किसी भी दशा में व्यतिक्रमी पक्षकार द्वारा संदत्त किया जाएगा ।

(4) प्रश्नमालाएं सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के परिशि-ट ग के प्ररूप सं. 2 में उपबंधित प्ररूप में ऐसे परिवर्तनों के साथ होगी जैसी परिस्थितियों की अपेक्षा हो ।

(5) जहां वाद का कोई पक्षकार निगम या व्यक्तियों का निकाय चाहे निगमित है या नहीं, चाहे अपने निजी नाम से या किसी अधिकारी या अन्य व्यक्ति के नाम से वाद लाने या वाद लाए जाने के लिए सशक्त है, वहां कोई विपक्षी पक्षकार ऐसे निगम या निकाय के किसी सदस्य या अधिकारी को प्रश्नमालाएं देने के लिए उसे अनुज्ञात करने हेतु आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और तदनुसार आदेश किया जा सकेगा ।

(6) किसी प्रश्नमाला का उत्तर देने के लिए किसी आक्षेप को इस आधार पर कि यह कलंकात्मक या असंगत या वाद के प्रयोजन के लिए सद्भाविक नहीं लगता है, या पूछे गए वि-नय उस प्रक्रम पर पर्याप्त तात्विक नहीं है, या विशे-ाधिकार या किसी अन्य आधार को उत्तर में शपथपत्र में लिया जाएगा ।

(7) किसी प्रश्नमाला को इस आधार पर अपास्त किया जा सकेगा कि उन्हें अयुक्तियुक्ततः या खिजाऊपन के लिए प्रदर्शित किया गया है या इस आधार पर हटा दिया गया है कि वे अतिविस्तृत, दमनात्मक, अनावश्यक या

कलंककर है ; और इस प्रयोजन के लिए कोई आवेदन प्रश्नमालाओं की तामीली के पश्चात् सात दिनों के भीतर किया जाए ।

(8) प्रश्नमालाओं का उत्तर दस दिनों के भीतर या ऐसे अन्य समय के भीतर जो न्यायालय अनुज्ञात करे शपथपत्र फाइल कर दिया जाए ।

(9) प्रश्नमालाओं के उत्तर में शपथपत्र सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के परिशि-ट ग के प्ररूप 3 में उपबंधित प्ररूप में ऐसे परिवर्तनों के साथ दिया जाएगा जैसी परिस्थितियों की अपेक्षा हो ।

(10) उत्तर में किसी शपथपत्र पर कोई आपत्ति नहीं की जाएगी, किंतु अपर्याप्त के रूप में आक्षेपित ऐसे किसी शपथपत्र की पर्याप्तता या अन्यथा का अवधारण न्यायालय द्वारा किया जाएगा ।

(11) जहां प्रश्नमाला में पूछे गए प्रश्नों पर कोई व्यक्ति प्रश्न का लोप करता है या अपर्याप्त उत्तर देता है तो प्रश्न पूछने वाला पक्षकार न्यायालय से उससे यथास्थिति उत्तर देने या और उत्तर देने की अपेक्षा करते हुए आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा । और जैसा न्यायालय निदेश दे उससे शपथपत्र या मौखिक परीक्षा द्वारा उत्तर देने या और उत्तर देने की अपेक्षा करते हुए आदेश किया जा सकता है ।

3. निरीक्षण

(1) सभी पक्षकार लिखित कथन या प्रतिदावे का लिखित कथन फाइल करने की तारीख के तीस दिनों के भीतर प्रकटित सभी दस्तावेजों का निरीक्षण पूरा करेंगे । न्यायालय स्वविवेकानुसार आवेदन पर इस समय-सीमा को बढ़ा सकेगा, किंतु किसी भी दशा में तीस दिनों से परे नहीं ।

(2) कार्यवाहियों का कोई पक्षकार कार्यवाही के किसी प्रक्रम पर अन्य पक्षकार द्वारा दस्तावेजों के निरीक्षण या पेश करने के लिए न्यायालय से निदेश की ईप्सा कर सकेगा जिसके निरीक्षण का ऐसे पक्षकार द्वारा इनकार किया

गया है या पेश करने की नोटिस जारी होने के बावजूद दस्तावेज पेश नहीं किए गए हैं ।

(3) ऐसे आवेदन का निपटान, उत्तर और प्रत्युत्तर फाइल करने (यदि न्यायालय द्वारा अनुज्ञात है) और सुनवाई सहित ऐसे आवेदन के फाइल करने के तीस दिनों के भीतर किया जाएगा ;

(4) यदि उपरोक्त आवेदन मंजूर किया जाता है तो निरीक्षण और उसकी प्रतियां इसे चाहने वाले पक्षकार को ऐसे आदेश के पांच दिनों के भीतर प्रस्तुत किया जाए ।

(5) किसी पक्षकार को न्यायालय की इजाजत के सिवाय ऐसे दस्तावेज का अवलंब लेने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी जिसे वह प्रकटित करने में असफल रहा है या जिसका निरीक्षण नहीं कराया गया ।

(6) न्यायालय ऐसे व्यतिक्रमी पक्षकार के विरुद्ध अनुकरणीय खर्चा अधिरोपित कर सकेगा जो जानबूझकर या उपेक्षा से वाद से संबंधित या विनिश्चय करने के लिए आवश्यक सभी दस्तावेजों को प्रकट करने में असफल रहा और जो उनकी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में है या जहां न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि किसी दस्तावेज के निरीक्षण या प्रतियों से सदो-नतः या अयुक्तियुक्ततः विधारित या इनकार किया गया था ।

4. दस्तावेजों की स्वीकृति और प्रत्याख्यान

(1) प्रत्येक पक्षकार निरीक्षण के पूरा होने के पंद्रह दिनों के भीतर या किसी पश्चात् तारीख को जो न्यायालय द्वारा नियत हो, प्रकटित सभी दस्तावेजों की स्वीकृति या प्रत्याख्यान और जिसका निरीक्षण पूरा हो चुका है, का कथन प्रस्तुत करेगा ।

(2) स्वीकृति और प्रत्याख्यान के कथन में सुस्प-टतः यह उपवर्णित होगा कि क्या ऐसा पक्षकार,

(क) दस्तावेज के अंतर्वस्तु की सत्यता ;

(ख) दस्तावेज के अस्तित्व ;

(ग) दस्तावेज के नि-पादन ;

(घ) दस्तावेज के निर्गमन या प्राप्ति ;

(ङ) दस्तावेज की अभिरक्षा

की स्वीकृति या प्रत्याख्यान कर रहा है ।

स्प-टीकरण : उपांतरित आदेश 11 के उपनियम 3(2)(ख) के अनुसार किए गए दस्तावेज के अस्तित्व की स्वीकृति या प्रत्याख्यान के कथन में दस्तावेज के अंतर्वस्तु की स्वीकृति या प्रत्याख्यान सम्मिलित होगा ।

(3) प्रत्येक पक्षकार उपरोक्त किन्हीं आधारों के अधीन दस्तावेज का प्रत्याख्यान करने के कारण उपवर्णित करेगा । असज्जित और असमर्थित प्रत्याख्यानों को दस्तावेज का प्रत्याखन नहीं समझा जाएगा और तब ऐसे दस्तावेज का सबूत न्यायालय के विवेकाधिकार पर निर्भर होगा ।

(4) तथापि, कोई पक्षकार तृतीय पक्षकार दस्तावेजों के लिए मात्र प्रत्याख्यान प्रस्तुत कर सकेगा जिसके बारे में प्रत्याख्यान करने वाले पक्षकार को कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं है और प्रत्याख्यान करने वाला पक्षकार किसी भी प्रकार से किसी रीति में पक्षकार नहीं है ।

(5) स्वीकृति और प्रत्याख्यान के कथन के समर्थन में शपथपत्र के कथन की अंतर्वस्तुओं की सत्यता की पुन्टि करते हुए फाइल की जाएगी ।

(6) इस दशा में कि जब न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि कोई पक्षकार उपरोक्त किसी मानदंड के अधीन असम्यक् रूप से दस्तावेज की स्वीकृति से इनकार किया है तो दस्तावेज की ग्राह्यता को विनिश्चित करने के लिए खर्चा (जिसके अंतर्गत अनुकरणीय खर्चा है) न्यायालय द्वारा ऐसे

पक्षकार पर अधिरोपित की जा सकेगी ।

(7) न्यायालय किसी दस्तावेज के अतिरिक्त सबूत के अधित्यजन या खंडन सहित स्वीकृत दस्तावेजों की बावत आदेश पारित कर सकेगा ।

5. दस्तावेजों का पेश किया जाना

(1) कार्यवाही का कोई पक्षकार ऐसे वाद में प्रश्नगत किसी वि-नय से संबंधित किसी वाद की विचाराधीनता के दौरान किसी समय किसी पक्षकार या व्यक्ति द्वारा ऐसे पक्षकार या व्यक्ति के कब्जे या शक्ति के ऐसे दस्तावेजों को पेश करने की ईप्सा कर सकेगा या न्यायालय आदेश दे सकेगा ।

(2) ऐसे दस्तावेज को पेश करने की नोटिस सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के परिशि-ट ग के प्ररूप 7 में उपबंधित प्ररूप में जारी की जाएगी ।

(3) ऐसे पक्षकार या व्यक्ति को जिसे पेश करने की ऐसी नोटिस जारी की जाती है, ऐसे दस्तावेज को पेश करने या ऐसे दस्तावेज को पेश न करने की अपनी असमर्थता का उत्तर देने के लिए सात दिनों से अन्यून और पंद्रह दिनों से अनधिक का समय दिया जाएगा ।

(4) न्यायालय पेश करने की नोटिस जारी करने के पश्चात् ऐसे दस्तावेज को पेश करने से इनकार करने वाले पक्षकार के विरुद्ध प्रतिकूल नि-कर्ष निकाल सकेगा और जहां ऐसे पेश न करने के पर्याप्त कारण नहीं दिए गए हैं, खर्चे का आदेश देगा ।

6. इलैक्ट्रानिक अभिलेख

(1) इलैक्ट्रानिक अभिलेख (सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 में यथा परिभाषित) के प्रकटन और निरीक्षण की दशा में प्रिन्टआउट का प्रस्तुत किया जाना उपरोक्त उपबंधों का पर्याप्त अनुपालन होगा ।

(2) पक्षकारों के स्वविवेक पर या जहां अपेक्षित हो (जब पक्षकार दृश्य

और/या श्रव्य वीडियो अंतर्वस्तु पर भरोसा करने की इच्छा करते हैं) इलैक्ट्रानिक अभिलेख की प्रतियां प्रिन्टआउट के अलावा या इसके बदले में इलैक्ट्रानिक प्ररूप में दिया जा सकेगा ।

(3) जहां इलैक्ट्रानिक अभिलेख प्रकटित दस्तावेजों का भाग गठित करते हैं, वहां पक्षकार द्वारा फाइल की जाने वाली शपथ पर घो-णा यह विनिर्दि-ट करेगी :

(क) ऐसे इलैक्ट्रानिक अभिलेख के पक्षकार ;

(ख) ऐसी रीति जिसमें ऐसा इलैक्ट्रानिक अभिलेख पेश किया गया और किसके द्वारा ;

(ग) प्रत्येक इलैक्ट्रानिक अभिलेख की तैयारी या भंडारण या निर्गत या प्राप्ति की तारीख और समय ;

(घ) ऐसे इलैक्ट्रानिक अभिलेख का स्रोत तथा तारीख और समय जब इलैक्ट्रानिक अभिलेख का मुद्रण किया गया ;

(ङ) ई-मेल आई.डी. की दशा में, स्वामित्व, अभिरक्षा और ऐसे ई-मेल आई.डी तक पहुंच का ब्यौरा ;

(च) कम्पूयटर या कम्प्यूटर संसाधन (जिसके अतंर्गत बाह्य सर्बर या क्लाउड सम्मिलित है) पर भंडारित दस्तावेजों की दशा में, कम्पयूटर या कम्प्यूटर संसाधन पर ऐसे आंकड़े के स्वामित्व, अभिरक्षा और पहुंच के ब्यौरे ;

(छ) अभिसाक्षी की अंतर्वस्तु की जानकारी और अंतर्वस्तु की सत्यता;

(ज) क्या ऐसे दस्तावेज या आंकड़े को तैयार करने या प्राप्त करने या भंडारित करने के लिए प्रयुक्त कम्प्यूटर या कम्प्यूटर संसाधन ठीक तरह से कार्य कर रहा था और अपकृत्य की दशा में कि ऐसे अपकृत्य ने

भंडारित दस्तावेज की अंतर्वस्तुओं को प्रभावित नहीं किया ;

(झ) प्रिंट आउट या प्रस्तुत प्रति मूल कंप्यूटर या कंप्यूटर संसाधन से ली गई थी ;

(4) किसी इलैक्ट्रानिक अभिलेख के प्रिंट आउट या इलैक्ट्रानिक प्ररूप की प्रति का अवलंब लेने वाले पक्षकार से इलैक्ट्रानिक अभिलेख का निरीक्षण कराने की अपेक्षा नहीं होगी बशर्ते ऐसे पक्षकार द्वारा यह घो-णा की जाए कि ऐसी प्रत्येक प्रति जो पेश की गई है, मूल इलैक्ट्रानिक अभिलेख से बनाई गई है ;

(5) न्यायालय कार्यवाही के किसी प्रक्रम पर इलैक्ट्रानिक अभिलेख की ग्राह्यता का निदेश दे सकेगा ।

(6) कोई पक्षकार न्यायालय से निदेश की ईप्सा कर सकेगा और न्यायालय ऐसे इलैक्ट्रानिक अभिलेख की स्वीकृति से पूर्व मेटाडाटा या लागत सहित किसी इलैक्ट्रानिक अभिलेख का और सबूत प्रस्तुत करने का निदेश स्वप्रेरणा से जारी कर सकेगा ।

7. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के कतिपय उपबंधों का लागू न होना

संदेह को दूर करने के लिए, यह स्प-ट किया जाता है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 13 नियम 1, आदेश 7 नियम 14 और आदेश 8 नियम 1क उच्च न्यायालय के वाणिज्यिक प्रभागों या वाणिज्यिक न्यायालयों के समक्ष वादों या आवेदनों को लागू नहीं होंगे ।

9. आदेश 13क का अंतःस्थापन — सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची में आदेश 13 के पश्चात् निम्नलिखित आदेश अंतःस्थापित किया जाएगा:

"आदेश 13क - संक्षिप्त निर्णय

1. ऐसे वादों की व्याप्ति और वर्ग जिन्हें यह आदेश लागू होगा

(1) यह आदेश ऐसी प्रक्रिया उपवर्णित करता है जिसके द्वारा न्यायालय मौखिक साक्ष्य अभिलिखित किए बिना किसी वाणिज्यिक विवाद वि-नयक दावे का विनिश्चय कर सकेंगे ।

(2) इस आदेश के प्रयोजन के लिए, 'दावे' में निम्नलिखित सम्मिलित होगा :

(क) किसी दावा का भाग ;

(ख) कोई विशि-ट प्रश्न जिस पर दावा (चाहे पूर्णतः या भागतः) आधारित है ; या

(ग) यथास्थिति, प्रतिदावा ।

(3) प्रतिकूल किसी बात के होते हुए, इस आदेश के अधीन संक्षिप्त निर्णय का आवेदन ऐसे किसी वाणिज्यिक विवाद जिसे मूलतः आदेश 37 के अधीन संक्षिप्त वाद के रूप में फाइल किया गया है, की बावत वाद में नहीं किया जाएगा ।

2. संक्षिप्त निर्णय के लिए आवेदन का प्रक्रम

आवेदक प्रतिवादी पर समन की तामीली के पश्चात् किसी समय संक्षिप्त निर्णय के लिए आवेदन कर सकेगा ।

परंतु न्यायालय द्वारा वाद की बावत विवाद्यक विरचित करने के पश्चात् ऐसे आवेदक द्वारा संक्षिप्त निर्णय के लिए कोई आवेदन नहीं किया जा सकेगा।

3. संक्षिप्त निर्णय के आधार

न्यायालय किसी दावे पर वादी या प्रतिवादी के विरुद्ध संक्षिप्त निर्णय दे सकेगा यदि वह यह समझता है कि :

(क) वादी के पास यथास्थिति, दावे की सफलता पाने की कोई

वास्तविक पूर्वापेक्षा नहीं है या प्रतिवादी के पास दावे का सफलतापूर्वक प्रतिवाद करने की कोई वास्तविक पूर्वापेक्षा नहीं है ; और

(ख) ऐसा कोई अकाट्य कारण नहीं है कि मौखिक साक्ष्य अभिलिखित करने के पूर्व दावे का निपटान न किया जाए ।

4. प्रक्रिया

(1) किसी न्यायालय को संक्षिप्त निर्णय के लिए आवेदन में किसी अन्य वि-नय के अलावा जिसे आवेदक सुसंगत समझे नीचे उपनियम (क)-(ङ) में वर्णित वि-नय सम्मिलित करेगा :

(क) आवेदन में यह कथन होना चाहिए कि यह इस आदेश के अधीन किया गया संक्षिप्त निर्णय के लिए आवेदन है ;

(ख) आवेदन संक्षिप्ततः --

(i) सभी तात्विक तथ्यों का प्रकट करेगा ; और

(ii) विधि का बिंदु, यदि कोई है, की पहचान करेगा ;

(ग) यदि आवेदक किसी दस्तावेजी साक्ष्य का अवलंब लेना चाहता है तो आवेदक को,-

(i) अपने आवेदन में ऐसा दस्तावेजी साक्ष्य सम्मिलित करना चाहिए और

(ii) ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य के सुसंगत अंतर्वस्तु की पहचान करे जिसका आवेदक अवलंब ले रहा है ;

(घ) आवेदक को कारण बताना चाहिए कि यथास्थिति, दावे पर सफल होने या दावे की प्रतिरक्षा करने की कोई वास्तविक पूर्वापेक्षा नहीं है ।

(ङ) आवेदक को उल्लेख करना चाहिए कि आवेदक क्या

अनुतो-न मांग रहा है और ऐसे अनुतो-न मांगने के लिए आधारों का संक्षेप में उल्लेख करे ।

(2) जहां संक्षिप्त निर्णय की सुनवाई नियत हो चुकी है, वहां प्रत्यर्थी को कम से कम तीस दिन की निम्न के संबंध में नोटिस दी जानी चाहिए--

(क) सुनवाई के लिए नियत तारीख ; और

(ख) ऐसा दावा जिसका ऐसी सुनवाई पर न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाना प्रस्तावित है ।

(3) प्रत्यर्थी संक्षिप्त निर्णय के आवेदन की नोटिस की प्राप्ति या सुनवाई की नोटिस (जो पूर्वतर है) के तीस दिनों के भीतर कोई अन्य वि-नय जिसे प्रत्यर्थी सुसंगत समझे के अलावा नीचे उपनियम (क)-(च) में वर्णित वि-नयों को पूरा करते हुए उत्तर फाइल कर सकेगा :

(क) उत्तर में संक्षिप्ततः निम्नलिखित होना चाहिए :

(i) सभी तात्विक तथ्यों का प्रकटन ;

(ii) विधि के बिंदु, यदि कोई है, की पहचान ; और

(iii) कारण का उल्लेख कि आवेदक द्वारा ईप्सित अनुतो-न को क्यों न मंजूर किया जाए ।

(ख) यदि प्रत्यर्थी अपने उत्तर में किसी दस्तावेजी साक्ष्य का अवलंब लेना चाहता है तो प्रत्यर्थी को --

(i) अपने उत्तर में ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य को सम्मिलित करना चाहिए ; और

(ii) एसे दस्तावेजी साक्ष्य के सुसंगत अंतर्वस्तु की पहचान करनी चाहिए, जिसका प्रत्यर्थी अवलंब ले रहा है ;

(ग) उत्तर में ऐसा कारण उल्लिखित होना चाहिए कि क्यों, यथास्थिति, दावे पर सफल होने या दावे की प्रतिरक्षा करने की वास्तविक पूर्वापेक्षाएं हैं ;

(घ) उत्तर में संक्षेपतः ऐसे विवाद्यकों का उल्लेख होना चाहिए जो विचारण के लिए विरचित किए जाने हों ;

(ङ) उत्तर में यह पहचान होनी चाहिए क्या और साक्ष्य विचार में अभिलेख पर लाए जाएंगे जो संक्षिप्त निर्णय के प्रक्रम पर अभिलेख पर नहीं लाए जा सके थे ; और

(च) उत्तर में यह उल्लेख होना चाहिए कि साक्ष्य या अभिलेख पर सामग्री, यदि कोई है, के आलोक में, न्यायालय को संक्षिप्त निर्णय की आगे कार्यवाही नहीं करनी चाहिए ।

5. संक्षिप्त निर्णय की सुनवाई के लिए साक्ष्य

(1) इस आदेश में किसी बात के होते हुए, यदि संक्षिप्त निर्णय के आवेदन का प्रत्यर्थी सुनवाई के दौरान अतिरिक्त दस्तावेजी साक्ष्य का अवलंब लेने की वांछा करता है तो प्रत्यर्थी को :

(क) ऐसा दस्तावेजी साक्ष्य फाइल करनी चाहिए ; और

(ख) सुनवाई की तारीख से कम से कम पंद्रह दिन पूर्व आवेदन के प्रत्येक अन्य पक्षकार को ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य की प्रतियां देनी चाहिए ।

(2) इस आदेश में किसी बात के होते हुए भी, यदि संक्षिप्त निर्णय का आवेदक प्रत्यर्थी के दस्तावेजी साक्ष्य के उत्तर में दस्तावेजी साक्ष्य का अवलंब लेने की वांछा करता है तो आवेदक को :

(क) उत्तर में ऐसा दस्तावेजी साक्ष्य फाइल करना चाहिए ; और

(ख) सुनवाई की तारीख से कम से कम पांच दिन पूर्व प्रत्यर्थी को

ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य की प्रति तामील करनी चाहिए ।

(3) प्रतिकूल किसी बात के होते हुए भी, उपरोक्त उपनियम (1)-(2) दस्तावेजी साक्ष्य की अपेक्षा नहीं करेगा :

(क) यदि ऐसा दस्तावेजी साक्ष्य पहले ही फाइल किया जा चुका है तो फाइल करने की ; या

(ख) उस पक्षकार पर तामील करने की जिस पर यह पहले तामील हो चुका है ।

6. ऐसे आदेश जो न्यायालय द्वारा किए जा सकेंगे

(1) इस आदेश के अधीन किए गए आवेदन पर, न्यायालय निम्न सहित ऐसे आदेश कर सकेगा जो वह अपने विवेक से ठीक समझे :

(क) दावे पर निर्णय ;

(ख) नीचे नियम 7 के अनुसार सशर्त आदेश ;

(ग) आवेदन की खारिजी ;

(घ) दावे के एक भाग की खारिजी और दावे के उस भाग पर निर्णय जो खारिज नहीं किया गया है ;

(ङ) अभिवचनों (चाहे पूर्णतः या भागतः) का लोप करना ; या

(च) आदेश 40क के अधीन मामला प्रबंधन के लिए आगे कार्यवाही करने का अतिरिक्त निदेश ।

(2) जहां न्यायालय उपरोक्त उपनियम 1(क)-(च) में यथावर्णित कोई आदेश करता है तो न्यायालय ऐसे आदेश करने का कारण अभिलिखित करेगा।

7. सशर्त आदेश

(1) जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि यह संभव है कि दावा या

प्रतिरक्षा सफल हो सकता है किंतु यह असंभाव्य है कि वह ऐसा करे, तो न्यायालय उपरोक्त नियम 6(ख) में यथावर्णित सशर्त आदेश कर सकेगा ।

(2) जहां न्यायालय सशर्त आदेश करता है, वह --

(क) निम्नलिखित सभी या किसी शर्त के अधीन रहते हुए यह कर सकेगा :

(i) पक्षकार से न्यायालय में एक धनराशि निक्षेप करने की अपेक्षा ;

(ii) पक्षकार से यथास्थिति, दावे या प्रतिरक्षा के संबंध में विनिर्दि-ट कदम उठाने की अपेक्षा ;

(iii) पक्षकार से यथास्थिति, ऐसी प्रतिभूति देने या खर्चे के प्रत्यास्थापन के लिए ऐसी प्रतिभू उपलब्ध कराने की अपेक्षा करना जो न्यायालय ठीक और उचित समझे ; या

(iv) ऐसी हानि जो किसी पक्षकार द्वारा वाद के विचाराधीनता के दौरान उठाने की संभावना है, के प्रत्यास्थापन के लिए प्रतिभूति उपलब्ध कराने सहित ऐसी अन्य शर्तें अधिरोपित करना, जो न्यायालय स्वविवेक से ठीक समझे ;

(ख) किसी पक्षकार के विरुद्ध कि उसने सशर्त आदेश का पालन नहीं किया है, निर्णय पारित करने सहित सशर्त आदेश का पालन करने की असफलता के परिणाम विनिर्दि-ट करना ।

8. खर्चा अधिरोपित करने की शास्ति :

न्यायालय धारा 35 और धारा 35क के उपबंधों के अनुसार संक्षिप्त निर्णय के आवेदन में खर्चे के संदाय का आदेश कर सकेगा ।

10. आदेश 40 का विलोपन : सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली

अनुसूची के आदेश 40 का लोप किया जाएगा ।

11. आदेश 40क का अंतःस्थापन : सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची में आदेश 40 के पश्चात् निम्नलिखित आदेश अंतःस्थापित किया जाएगा ।

आदेश 40-क

मामला प्रबंधन सुनवाई

(1) **पहली मामला प्रबंधन सुनवाई** - न्यायालय वाद के सभी पक्षकारों द्वारा दस्तावेजों की स्वीकृति या प्रत्याख्यान के शपथपत्र फाइल करने की तारीख से चार सप्ताह के अपश्चात् पहली 'मामला प्रबंधन सुनवाई' करेगा ।

(2) **मामला प्रबंधन सुनवाई में पारित किए जाने वाले आदेश** - मामला प्रबंधन सुनवाई में, पक्षकारों की सुनवाई के पश्चात् और एक बार वह पाता है कि तथ्य और विधि के ऐसे विवाद्यक है जिन पर विचारण किए जाने की अपेक्षा है तो न्यायालय आदेश पारित कर सकेगा :

(क) अभिवचनों और उसके समक्ष पेश दस्तावेजों की परीक्षा करने के पश्चात् सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 14 और आदेश 10 नियम 2 के अधीन न्यायालय संचालित की गई परीक्षा, यदि अपेक्षित हो, के अनुसार पक्षकारों के बीच विवाद्यक विरचित करना ;

(ख) पक्षकारों द्वारा परीक्षा कराए गए साक्षियों की सूची बनाना ;

(ग) वह तारीख नियत करना कि कब तक पक्षकारों द्वारा साक्ष्य का शपथपत्र फाइल किया जाए ;

(घ) वह तारीख नियत करना जिसको पक्षकारों के साक्षियों का साक्ष्य अभिलिखित किया जाना है ;

(ङ) वह तारीख नियत करना कि कब तक पक्षकारों द्वारा न्यायालय के समक्ष लिखित कथन फाइल किया जाए ;

(च) वह तारीख नियत करना जिसको न्यायालय द्वारा मौखिक बहस सुना जाना है ;

(छ) पक्षकारों और/या उनके अधिवक्ताओं के लिए मौखिक बहस करने की समय-सीमा तय करना ।

(3) **विचारण को पूरा करने की समय-सीमा** - इस आदेश के नियम 2 के प्रयोजनों के लिए तारीखें नियत करने या समय-सीमा तय करने के न्यायालय यह सुनिश्चित करेगा कि बहसें पहली मामला प्रबंधन सुनवाई की तारीख से छह मास के अपश्चात् समाप्त हो जाएं ।

(4) **दैनन्दिन आधार पर मौखिक साक्ष्य का अभिलेख** - न्यायालय यथासंभव यह सुनिश्चित करेगा कि साक्ष्य का अभिलेख दैनन्दिन आधार पर जब तक सभी साक्षियों की प्रति-परीक्षा पूरी नहीं हो जाती, क्रियान्वित की जाएगी ।

(5) **विचारण के दौरान मामला प्रबंधन सुनवाई** - न्यायालय, यदि आवश्यक है, समुचित आदेश जारी करने के लिए विचारण के दौरान किसी समय भी मामला प्रबंधन सुनवाई आयोजित कर सकेगा जिससे कि नियम 2 के अधीन नियत तारीखों का पक्षकारों द्वारा पालन और वाद के शीघ्र निपटान का सुकर बनाया जाना सुनिश्चित किया जा सके ।

(6) **मामला प्रबंधन सुनवाई में न्यायालय की शक्तियां** -(1) इस आदेश के अधीन आयोजित किसी मामला प्रबंधन सुनवाई में, न्यायालय को निम्नलिखित की शक्ति होगी --

(क) विवाद्यक विरचित करने के पूर्व, आदेश 8-क के अधीन पक्षकारों द्वारा फाइल किसी लंबित आवेदन की सुनवाई और विनिश्चित करने ;

(ख) विवाद्यक विरचित करने के लिए सुसंगत और आवश्यक दस्तावेजों या अभिवचनों के संकलन फाइल करने के लिए पक्षकारों को निदेश देने ;

(ग) किसी प्रैक्टिस निदेश या न्यायालय आदेश के अनुपालन के लिए

समय बढ़ाने या घटाने, यदि वह ऐसा करने का पर्याप्त कारण पाता है ;

(घ) स्थगन या सुनवाई आगे बढ़ाने, यदि वह ऐसा करने का पर्याप्त कारण पाता है ;

(ङ) आदेश 10 के नियम 2 के अधीन परीक्षा के प्रयोजन से पक्षकार को न्यायालय में उपस्थित होने का निदेश देने ;

(च) कार्यवाहियों को समेकित करने ;

(छ) किसी साक्षी का नाम या साक्ष्य हटाने यदि वह विरचित विवाद्यकों के लिए असंगत समझता है ;

(ज) किसी विवाद्यक के पृथक विचारण का निदेश देने ;

(झ) ऐसे आदेश जिसमें विवाद्यकों का विचारण किए जाने हैं, का विनिश्चय करने ;

(ञ) किसी विवाद्यक को विचार से अपवर्जित करने ;

(ट) प्रारंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय के पश्चात् दावे को खारिज करने या निर्णय देने ;

(ठ) यह निदेश देने कि साक्ष्य आयोग द्वारा अभिलिखित किया जाए जहां आदेश 26 के अनुसार आवश्यक हो ।

(ड) असंगत, अग्राह्य और तर्कसंगत सामग्री वाले पक्षकारों द्वारा फाइल साक्ष्य के किसी शपथपत्र को नामंजूर करने ;

(ढ) असंगत, अग्राह्य या तर्कसंगत सामग्री वाले पक्षकारों द्वारा फाइल साक्ष्य के शपथपत्र के किसी भाग को हटाने ;

(ण) इस प्रयोजन के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त ऐसे प्राधिकारी को साक्ष्य के अभिलेखन की शक्ति प्रत्यायोजित करने ;

(त) आयोग या किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा साक्ष्य के अभिलेख की मानीटरिंग से संबंधित कोई आदेश पारित करने ;

(थ) किसी पक्षकार को खर्चा बजट फाइल करने या आदान-प्रदान करने;

(द) मामले के प्रबंधन के प्रयोजन के लिए या वाद के दक्षतापूर्ण निपटान सुनिश्चित करने के अभिभावी उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए निदेश जारी करने या कोई आदेश पारित करने ।

(2) जब न्यायालय इस आदेश के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग हेतु आदेश पारित करता है तो वह --

(क) न्यायालय में कोई धनराशि अदा करने की शर्त सहित, अन्य शर्तों के अधीन रहते हुए आदेश कर सकेगा ; और

(ख) आदेश या शर्त के पालन की असफलता के परिणाम विनिर्दि-ट कर सकेगा ।

(3) मामला प्रबंधन सुनवाई के लिए तारीख नियत करते समय, न्यायालय यह निदेश दे सकेगा कि पक्षकार भी ऐसे मामला प्रबंधन सुनवाई के लिए उपस्थित हों, यदि यह राय हो कि पक्षकारों के बीच समझौते की संभावना है ।

7. मामला प्रबंधन सुनवाई का स्थगन - (1) न्यायालय एकमात्र इस कारण से मामला प्रबंधन सुनवाई को स्थगित नहीं करेगा कि पक्षकार की ओर से उपस्थित होने वाला अधिवक्ता उपस्थित नहीं है ।

परंतु यदि अग्रिम आवेदन देकर सुनवाई के स्थगन की ईप्सा की जाती है तो न्यायालय ऐसे आवेदन करने वाले पक्षकार द्वारा ऐसे खर्चे के संदाय पर दूसरी तारीख को सुनवाई स्थगित कर सकेगा जैसा न्यायालय ठीक समझे ।

(2) इस नियम में किसी बात के होते हुए भी, यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अधिवक्ता की अनुपस्थिति का कारण उचित है तो वह

ऐसे निबंधनों और शर्तों पर जो वह ठीक समझे, दूसरी तारीख को सुनवाई स्थगित कर सकेगा ।

8. आदेशों के अननुपालन के परिणाम - जहां कोई पक्षकार मामला प्रबंधन सुनवाई में पारित न्यायालय के आदेश का पालन करने में असफल रहता है तो न्यायालय को --

(क) ऐसे अननुपालन को न्यायालय में खर्चे के संदाय द्वारा माफ करने की शक्ति होगी, या

(ख) अननुपालन करने वाले पक्षकार को शपथपत्र फाइल करने, साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने, लिखित निवेदन फाइल करने, मौखिक तर्क करने या विचारण में और बहस करने के अधिकार का पुरोबंध करने की शक्ति होगी ; या

(ग) वादपत्र खारिज करने या वाद मंजूर करने की शक्ति होगी जहां ऐसा अननुपालन जानबूझकर, बारंबार किया जाता है और खर्चे का अधिरोपण अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त नहीं है ।

12. आदेश 18 का संशोधन - पहली अनुसूची में आदेश 18 नियम 2 के उपनियम (3क), (3ख), (3ग) और (3घ) के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किए जाएंगे :

"(3क) कोई पक्षकार मौखिक बहस आरंभ होने के पूर्व चार सप्ताह के भीतर अपने मामले के समर्थन में संक्षिप्ततः और भिन्न-भिन्न शी-र्षकों के अधीन लिखित बहस प्रस्तुत करेगा और ऐसी लिखित बहस अभिलेख का भाग गठित करेगी ।

(3ख) लिखित बहस में स्प-टतः बहस के समर्थन में उद्धृत विधियों के उपबंध और पक्षकार द्वारा अवलंबित निर्णयों के प्रोद्धरण उपदर्शित होंगे और पक्षकार द्वारा अवलंबित किए जाने वाले ऐसे निर्णयों की प्रतियां सम्मिलित करेगा ।

(3ग) ऐसे लिखित बहस की प्रति साथ-साथ विपक्षी पक्षकार को प्रदान की जाएगी ।

(3घ) न्यायालय, यदि वह ठीक समझता है, बहस की समाप्ति के पश्चात् पक्षकारों को बहस की तारीख के पश्चात् एक सप्ताह के अपश्चात् अवधि के भीतर पुनरीक्षित लिखित कथन फाइल करने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

(3ङ) कोई स्थगन लिखित बहस फाइल करने के प्रयोजन के लिए तब तक मंजूर नहीं किया जाएगा जब तक न्यायालय लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से ऐसा स्थगन मंजूर करना आवश्यक नहीं समझता ।

(3च) मामले की प्रकृति और जटिलता को ध्यान में रखते हुए मौखिक निवेदन के लिए समय-सीमा के लिए न्यायालय स्वतंत्र होगा ।"

इसके अतिरिक्त, आदेश 18 में, नियम 4 के उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित अंतःस्थापित किया जाएगा :

(1क) ऐसे सभी साक्षी, जिनके साक्ष्य का पक्षकार द्वारा पेश किया जाना प्रस्तावित है के साक्ष्य के शपथपत्र पहली मामला प्रबंधन सुनवाई में निदेशित समय पर उस पक्षकार द्वारा साथ-साथ फाइल किया जाएगा ।

(1ख) कोई पक्षकार तब तक किसी साक्षी (ऐसा सभी जिसने पहले ही शपथपत्र फाइल किया है, सहित) के शपथपत्र द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य नहीं देगा जब तक उस प्रयोजन के लिए आवेदन में पर्याप्त हेतुक नहीं बताया जाता और ऐसा अतिरिक्त शपथपत्र फाइल करने की अनुज्ञा देते हुए कारण सहित आदेश न्यायालय द्वारा पारित नहीं किया जाता है ।

(1ग) तथापि, पक्षकार को ऐसे प्रत्याहरण पर निकाले गए किसी प्रतिकूल नि-क-र्ा के बिना उस साक्षी की प्रति-परीक्षा आरंभ होने के पूर्व किसी समय इस प्रकार फाइल किए गए किसी शपथपत्र को प्रत्याहृत करने का अधिकार होगा ।

परंतु कोई अन्य पक्षकार ऐसे प्रत्याहृत शपथपत्र में की गई किसी स्वीकृति को साक्ष्य के रूप में पेश करने और भरोसा करने का हकदार होगा ।

13. आदेश 19 का संशोधन — पहली अनुसूची के आदेश 19 के नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा :

4. न्यायालय साक्ष्य पर नियंत्रण कर सकेगा

(1) न्यायालय निदेश द्वारा विवाद्यकों जिस पर उसे साक्ष्य की अपेक्षा है और रीति जिसमें ऐसा साक्ष्य न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए, से संबंधित साक्ष्य को विनियमित कर सकेगा ।

(2) न्यायालय स्वविवेकानुसार और लेखबद्ध किए गए कारणों से ऐसे साक्ष्य को अपवर्जित कर सकेगा जो पक्षकारों द्वारा अन्यथा पेश किया जाए ।

5. साक्ष्य संपादित करना या नामंजूर करना

न्यायालय, स्वविवेकानुसार, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से,

(1) मुख्य परीक्षा के शपथपत्र के ऐसे भाग को संपादित कर सकेगा या संपादित करने का आदेश दे सकेगा जो उसके मतानुसार साक्ष्य गठित नहीं करते ;

(2) ग्राह्य साक्ष्य गठित न करने के रूप में प्रतिपरीक्षा के शपथपत्र को वापस या नामंजूर कर सकेगा ।

6. साक्ष्य के शपथपत्र का प्ररूप और मार्गदर्शक सिद्धांत

(1) शपथपत्र नीचे उपवर्णित प्ररूप और अपेक्षाओं के अनुसार होना चाहिए :

(क) ऐसा शपथपत्र ऐसी तारीखों और घटनाओं, जो किसी तथ्य या किसी अन्य वि-नय को बताने के लिए सुसंगत है, तक सीमित होना चाहिए और कालानुक्रमिक क्रम में होना चाहिए ।

(ख) जहां न्यायालय का यह मत है कि शपथपत्र अभिवचनों का मात्र पुनरुत्पादन है या किसी पक्षकार के मामले का विधिक आधार

अंतर्वि-ट करता है वहां न्यायालय, आदेश द्वारा शपथपत्र या शपथपत्र के ऐसे भागों को काट देगा जो वह ठीक और उचित समझे ।

(ग) शपथपत्र का प्रत्येक पैराग्राफ, यथासंभव, वि-नय के सुभिन्न भाग तक सीमित होना चाहिए ।

(घ) शपथपत्र में निम्नलिखित उल्लेख होगा :

(i) इसमें कौन सा कथन अभिसाक्षी की निजी जानकारी से किया गया है और कौन से सूचना या विश्वास के वि-नय हैं, और

(ii) किसी वि-नय की सूचना या विश्वास का स्रोत ।

(ङ) शपथपत्र -

(i) पृथक दस्तावेज के रूप में (या फाइल के कई दस्तावेजों में से एक) लगातार पृ-ठ संख्यांकित होना चाहिए ;

(ii) संख्यांकित पैराग्राफों में विभाजित किया जाना चाहिए ;

(iii) अंकों में व्यक्त तारीखों सहित सभी संख्याएं होनी चाहिए ; और

(iv) यदि शपथपत्र के मुख्य भाग में निर्दि-ट कोई दस्तावेज शपथपत्र या किसी अन्य शपथपत्र से उपाबद्ध है तो ऐसे दस्तावेज जिसका अवलंब लिया गया है, के उपाबद्ध और पृ-ठ संख्यांक का उल्लेख किया जाना चाहिए ।

11. आदेश 20 का संशोधन — पहली अनुसूची के आदेश 20 के नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाएगा :

"वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग या वाणिज्यिक अपीली प्रभाग, यथास्थिति बहस की समाप्ति के नब्बे दिनों के भीतर निर्णय सुनाएगा और उसकी प्रतियां इलैक्ट्रानिक डाक या अन्यथा के माध्यम से विवाद के सभी पक्षकारों को जारी की जाएंगी ।

परिशि-ट

सत्यता कथन

(पहली अनुसूची, आदेश 6 नियम 15क और आदेश 10 नियम 1 के अधीन)

[पक्षकार स्थिति और पक्षकार का पूरा नाम] द्वारा **सत्यता कथन**

मैं, उपरोक्त अभिसाक्षी, सत्यनि-ठा से प्रतिज्ञान करता हूं और निम्नलिखित घोि-त करता हूं :

1. मैं उपरोक्त वाद में [पक्षकार का नाम और सुसंगत ब्यौरा] हूं और इस शपथपत्र पर शपथ लेने के लिए सक्षम हूं ।

2. मैं मामले के तथ्यों से पर्याप्त रूप से भिज्ञ हूं और उससे संबंधित सभी सुसंगत दस्तावेजों और अभिलेखों की भी परीक्षा की है ।

3. मेरा यह कहना है कि पैराग्राफों में [विनिर्दि-ट पैरा सं. लिखें] किए गए कथन मेरी जानकारी से सही है और पैराग्राफ [विनिर्दि-ट पैरा सं. लिखें] में किए गए कथन प्राप्त सूचना पर आधारित हैं जिसका मैं सही होने का विश्वास करता हूं और पैराग्राफ [विनिर्दि-ट पैरा सं. लिखें] में किए गए कथन विधिक सलाह पर आधारित हैं ।

4. मेरा यह कहना है कि कोई मिथ्या कथन या किसी तात्विक तथ्य, दस्तावेज या अभिलेख का छिपाव नहीं है और मैंने ऐसी जानकारी सम्मिलित की है जो मेरे अनुसार इस वाद के लिए सुसंगत है ।

5. मेरा यह कहना है कि मेरे द्वारा आरंभ की गई कार्यवाहियों के तथ्यों और परिस्थितियों से संबंधित मेरी शक्ति, कब्जे, नियंत्रण या अभिरक्षा के सभी दस्तावेजों को प्रकट किया गया है और उसकी प्रतियां वादपत्र के साथ उपाबद्ध हैं और मेरी शक्ति, कब्जा, नियंत्रण या अभिरक्षा में कोई अन्य दस्तावेज नहीं है ।

6. मेरा यह कहना है कि उपरोक्त वर्णित अभिवचनों को मिलाकर कुल पृ-ठ सं. [पृ-ठों की सं.] है और प्रत्येक पृ-ठ पर मेरे हस्ताक्षर हैं ।

7. मेरा यह कहना है कि इसके उपाबंध मेरे द्वारा निर्दि-ट और अवलंबित दस्तावेजों की सही प्रतियां हैं ।

8. मेरा यह कहना है कि मुझे ज्ञात है कि किसी मिथ्या कथन या छिपाव के लिए, मैं विधि के अधीन अपने विरुद्ध कार्रवाई किए जाने का दायी होऊंगा ।

अभिसाक्षी

तारीख :

स्थान :

सत्यापन

उपरोक्त किए गए कथन मेरी जानकारी में सही हैं । सत्यापित [स्थान] इस [तारीख]

अभिसाक्षी